दिसम्बर २००० Rs. 10/-

चन्दामामा

चन्दामामा

सम्पुट - 102 दिसम्बर 2000 सञ्चिका-12

अन्तरङ्गम्

कहानियाँ

राजसम्मान (बेताल कथा) पृष्ठ संख्या 09
भाग्यवान पृष्ठ संख्या 16
बिन्दुसार की चित्रकारी पृष्ठ संख्या 20
भूषण की संदूक पृष्ठ संख्या 23
आँखें खुल गयीं पृष्ठ संख्या 38
निडर पृष्ठ संख्या 41
अष्टावधान पृष्ठ संख्या 52
संदेह और समाधान पृष्ठ संख्या 57
बेटे का निर्णय पृष्ठ संख्या 62

पौराणिक धारावाहिक

महाभारत - 59 पृष्ठ संख्या 45

ऐतिहासिक विभूतियाँ

पिशाच का नाटक - 1 पृष्ठ संख्या 33

विशेष

समाचारों में बच्चे पृष्ठ संख्या 06
भारत की गाथा - 11 पृष्ठ संख्या 28
इस माह जिनकी जयन्ती है पृष्ठ संख्या 32
भारत की खोज-प्रश्नोत्तरी पृष्ठ संख्या 60
सृजनात्मक स्पर्धा पृष्ठ संख्या 61
चित्र कैप्शन प्रतियोगिता पृष्ठ संख्या 66

इस माह का विशेष

राजसम्मान (बेताल कथा)

भूषण की संदूक

निडर

भारत की गाथा

Printed and Published by B. Viswanatha Reddi at B.N.K Press Pvt. Ltd., Chennai–600 026 on behalf of Chandamama India Limited, No.82, Defence Officers Colony, Ekattuthangal, Chennai - 600 097. Editor: Viswam

आप अपने
दूर रहनेवाले करीबियों के लिए
सोच सकते हैं

चन्दामामा

उन्हें उनकी
पसंद की भाषा में एक
पत्रिका दें

असमिया, बंगला, अंग्रेजी, गुजराती, हिन्दी, कन्नड़,
मलयालम, मराठी, उड़िया, संस्कृत, तमिल व तेलुगु

और उन्हें घर से दूर घर के
स्नेह को महसूस होने दें

शुल्क
सभी देशों में एयर मेल द्वारा बारह अंक 900 रुपये
भारत में भूतल डाक द्वारा
बारह अंक 120 रुपये

अपनी रकम डिमांड ड्राफ्ट या मनी आर्डर द्वारा
'चंदामामा इंडिया लिमिटेड' के नाम भेजें
सेवा में :

PUBLICATION DIVISION
CHANDAMAMA INDIA LIMITED
New 82 (Old 92), Defence Officers Colony, Ekkatuthangal, Chennai - 600 097.

संपादक
विश्वम

चन्दामामा पत्रिका विभाग
नया नं. 82 (पुराना नं.92),
डिफेन्स आफिसर्स कॉलोनी,
इकाडुथंगल,
चेन्नई - 600 097.
फोन/फॅक्स : 234 7384/
234 7399
e-mail :
chandamama@vsnl.com

For USA
Single copy $2
Annual subscription $20
Mail remittances to
INDIA ABROAD
43 West 24th Street
New York, NY 10010
Tel: (212) 929-1727
Fax (212) 627-9503

The stories, articles and designs contained in this issue are the exclusive property of the Publishers and copying or adapting them in any manner/ medium will be dealt with according to law.

हमारा अगला अंक सहस्त्राब्दि अंक के नाम से प्रकाशित होगा । जिसमें विशेष लेख स्वतंत्रता से पूर्व अर्द्ध-शताब्दी और स्वतंत्रता के बाद अर्द्ध-शताब्दी पर प्रकाशित होगा । बर्षो तक आप इस अंक की प्रति अपने पास संजोकर रखना चाहेंगे । २००१ का प्लैनर सदस्यों के अतिरिक्त इस अंक के साथ एक नया आकर्षण होगा । अतः यही समय है कि आप अपनी नियमित सदस्यता के बारे में सोचें । शीघ्र ही अपना शुल्क मनिआर्डर अथवा बैंक ड्राफ्ट द्वारा भेजें ।

संस्थापक
चक्रपाणि, बी. नागि रेड्डी

वर्ष की विदाई !

वर्ष २००० जो बड़े ही शोर-गुल तथा उत्साह के साथ आरम्भ हुआ अब समाप्त होने को है । बहुत लोगों का कहना था कि यह वर्ष २१ वीं शताब्दी का आरम्भिक चिन्ह है, तो बहुत लोगों का विचार बिल्कुल अलग था । उन लोगों के अनुसार नई शताब्दी मात्र जनवरी २००१ को आरम्भ होगी ।

अब जो यह वर्ष पूरा होने जा रहा है तो ऐसा कोई कारण नहीं है जिससे हम नये युग के आरम्भ को तथा इसकी ऐतिहासिक याद को न देखें । नई शताब्दी के स्वागत के उत्साह के साथ कुछ बहुत शुभ और हर्ष देनेवाला हो । नए विश्व के लिए, नए युग के लिए तथा नए समय के लिए यही हमारी आशा है ।

अनहोनी और विडम्बनाओं को उसके ऊपर ही छोड़ देना चाहिए क्योंकि समय न बुरा होता है न भला । समय की कोई आयु नहीं होती । समय मात्र २००० साल पुराना नहीं है । समय की आयु कोई माप नहीं सकता । हम मानवों ने ही अपने निर्णयों के अनुसार उसकी गिनती की ।

यह कोई नई शताब्दी नहीं है जो हमारे लिए अपने आप ही अच्छी और बुरी हो । सभी कुछ इस पर निर्भर करता है कि इससे हम क्या सीखते हैं। क्या कुछ नया उपार्जित करते हैं ।

यह सोचने में कोई हानि नहीं है कि इसके आरम्भ में हम बहुत उत्साहित होते हैं, परन्तु इसके लिए हमें व्यक्तिगत रूप से अपनी उत्तम विचारधाराएँ एवं सेवाएँ प्रदान करनी चाहिए ।

यही हमको करना होगा । इस वर्ष के दौरान चाहे हमारे जो भी अनुभव रहे हों जो कुछ भी हमने इससे सीखा, अब हम इसे प्रसन्नता के साथ विदा करते हैं ।
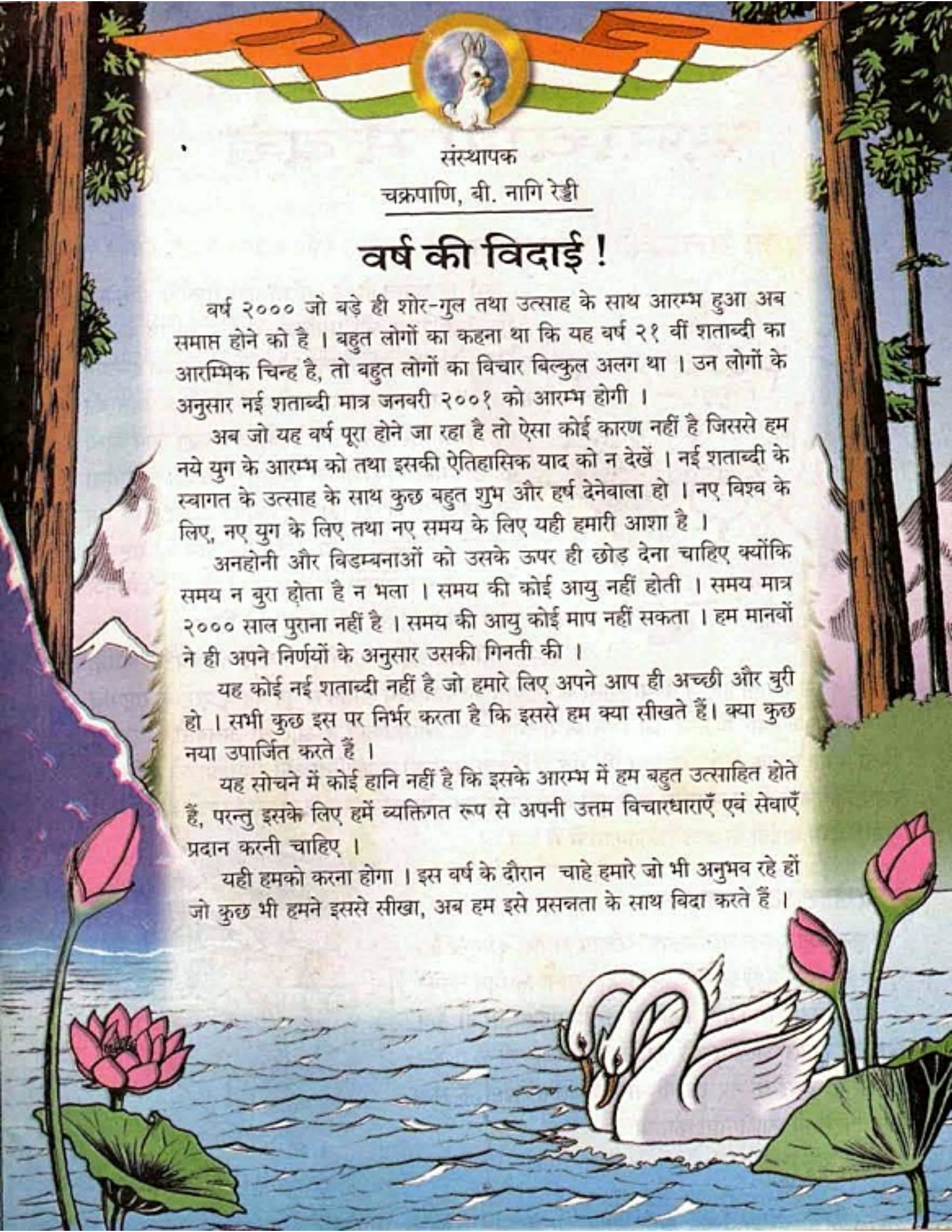
समाचारों में बच्चे

राष्ट्रपति का सलाहकार एक बालक

क्या तुम जानते हो कि ग्वाटेमाला के राष्ट्रपति अल्फोन्स पोर्टीलो को शिक्षा और पर्यावरण के लिए सलाह कौन दे रहा है? कोई और नहीं बल्कि १३ वर्षीय ''सैम्यूल इस्टेवन गोमेज ।'' यह बालक विशेष निमंत्रण पर मंत्रीमंडल की बैठक में भी हिस्सा लेता है । विलक्षण कहा जाने वाला यह छात्र पहले से ही गणित उत्तरार्ध पाठ्यक्रम ग्वाटेमाला विश्वविद्यालय से कर रहा है । उसका उद्देश्य है कि वह ऐरोनाटिक इन्जिनियर बनेगा । उसे एक दिन का राष्ट्रपति और एक दिन का लोकसभा वक्ता बनने जैसी राजनैतिक गतिविधियों में हिस्सा लेने का अवसर भी मिला ।

सैम्यूल भी अन्तर्राष्ट्रीय कूटनीति में कोई अनुभवहीन व्यक्ति नहीं है । इस वर्ष के प्रारम्भ में ग्वाटेमाला के राष्ट्रपति का कार्यालय छोड़ने से पूर्व वह यू.एस. के राष्ट्रपति क्लिन्टन, राजकुमार फिलिप, जो स्पैन के राजमुकुट के उत्तराधिकारी हैं और श्री अलबारो आरजू से मिला । यह बालक शिक्षा मंत्रालय की ओर से विद्वता सम्बन्धी सहकारिता और सीमाओं को बढ़ावा दे रहा है । कैनडा में दो भारतीय छात्र सुरी के पुनीत शेहल और कामलूपस के सुल्तान सन्दर शिक्षा मंत्री कुमारी पेन्नी प्राईडी के आठ सलाहकारों में से हैं ।

सबसे छोटा जादूगर

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विख्यात जादूगर सतीश देशमुख हैं । उनके कार्यक्रम ''दी इलुजन'' कहा जाने वाला आईटम उनकी ३ वर्षीय बेटी राजकुमारी किमाया ने पेश किया । जो अब विश्व में सबसे अल्पायु की जादूगर कही जा रही है । इस लड़की ने मुम्बई के नए फिल्मी नायक ह्रतिक रोशन के साथ काम करके भी काफी नाम कमाया ।

उन्हें विलक्षण कहें?

- जस्टिन शैपमैन केवल ६ वर्ष का है । उसने दो वर्ष की उम्र से पढ़ना आरम्भ किया था और अब रोचेस्टर विश्वविद्यालय के तीन कॉलेजों की कक्षाओं में प्रवेश ले लिया है। उसने होमर के ''इलियाड'' पर एक शोध पत्र लिखा जिसमें उसे दूसरा स्थान मिला। अब वह इतिहास के एक आरम्भिक विषय पर लिख रहा है ।
- लास एन्जेल्स की एम्मेट/फुर्ला फिल्म निर्माण कम्पनी द्वारा बनाई गई फिल्म ''कैम्प ग्रीज़ी'' को निर्देशक के लिए एक छोटे आकार की कुर्सी बनानी पड़ी, क्योंकि इस पारिवारिक फिल्म की निर्देशिका मात्र ११ वर्ष की शैली स्टोवाल है ।
- १२ वर्षीय रशीद ने केरल के बयानाद मुस्लिम जल्से में आश्चर्य पैदा कर दिया - जहाँ उसने रमजान के महीने में अपना धार्मिक भाषण दिया । वह हिन्दी, उर्दू, अंग्रेजी तथा अरबी भाषा में बिना झिझक भाषण दे सकता है ।

लड़के ने चार वेबसाईट आरम्भ की

चार साल पहले चेन्नई के ग्यारहवीं कक्षा के छात्र ए. वी. दिनेश ने माईक्रोसॉफ्ट द्वारा आयोजित दो परीक्षाएँ पास कीं । उस समय वह मात्र बारह वर्ष का था । उसके बाद वह विभिन्न आयु वर्ग के लोगों के लिए वेबसाईट बनाने में व्यस्त हो गया । अभी तक उसने नेट पर ४००० पेज बना दिए हैं जो ऑन लाईन हैं । स्पिकी किडस. कॉम, बच्चों के लिए, टीनएज टाईगरस. कॉम, किशोरों के लिए, जबकि डेवलेपर इनफोवे.कॉम, प्रोग्रामर के काम के लिए है । दिनेश वर्ल्ड.कॉम कई प्रकार की वेब साईट उपलब्ध कराता है ।

एक वर्ष पूरा करने पर

एक वर्ष पूर्व चन्दामामा पुनः आरम्भ हुआ । यह हम सभी के लिए एक प्रसन्नता का अवसर था। प्रिय पाठकों इस एक वर्ष के दौरान आपको आपकी मनपसंद पत्रिका ***चन्दामामा*** के १२ अंकों को प्राप्त करने का अवसर मिला । आपको कैसा अनुभव हो रहा है? आपकी प्रतिक्षा और धैर्य व्यर्थ नहीं हुआ और हमें पूर्ण विश्वास है कि हमने भी आपको निराश नहीं किया । आप जो कुछ भी चन्दामामा में पहले पढ़ते थे वही पुनः इसमें आप पढ़ रहे हैं । जैसे की रुचिकर विक्रम वेताल कथा, पौराणिक लोक कथा और काल्पनिक कथाएँ जो हमारे देश की महान परम्परा और संस्कृति को दर्शाती हैं । इसके अतिरिक्त दूसरे देशों की कहानियाँ भी आपकी मांग के अनुसार दी गईं । हमने आपको ओलम्पिक की पूरी कहानी भी कामिक्स के रूप में दिया और सम्भवतः पहली बार चन्दामामा में बच्चों के लिए सृजनात्मक प्रतिस्पर्धा और साथ-साथ उन्हीं के द्वारा बनाए गए चित्रों से कहानियों को सुसज्जित भी किया गया। जिसे हमने पिछले माह बाल विशेषांक का नाम दिया ।
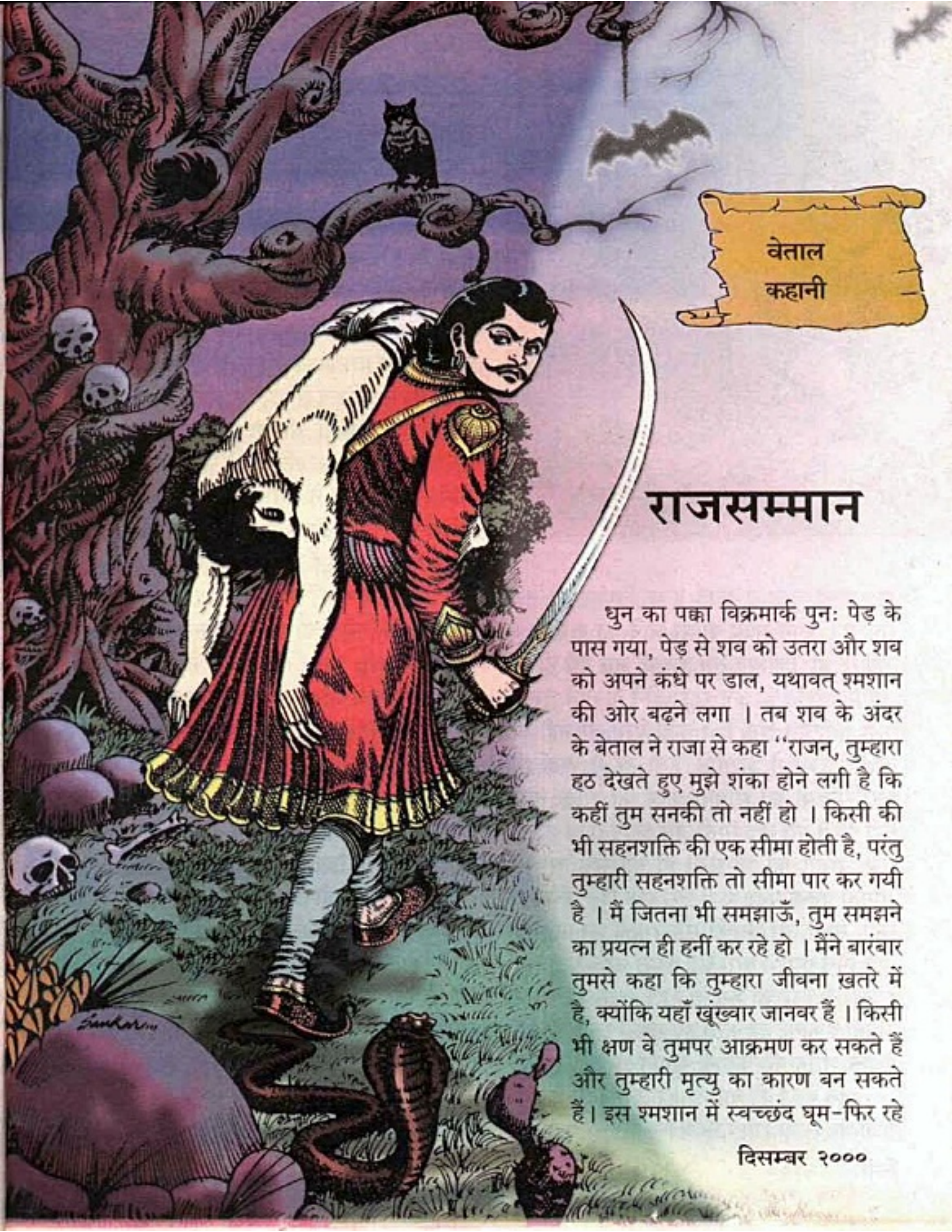
इस समय सूचना और तकनीक जिस तेजी से कार्य क्षेत्र में स्थापित हो रहे हैं, यह चन्दामामा में भी उसके देश-विदेश के शुभ चिंतकों के भावनात्मक सहयोग से सम्भव हो सका है । जिसके नए ढाँचे में साहसी और सराहनीय कार्यों का निर्णय भी लिया गया है, जैसे कि सिंडीकेशन, टेली-सीरियल, वेबसाईट आदि। फीचर फिल्म भी शीघ्र ही इस सूची में जोड़ दी जायेगी, जो जादुई नाम "***चन्दामामा***" के छाते तले आरम्भ होगी।

इसका मतलब ***चन्दामामा*** ने पुनः अपना गौरव प्राप्त कर लिया । इसका धन्यवाद हमारे सच्चे पाठकों को जाता है जिनकी संख्या दिन पर दिन बढ़ती जा रही है । इसका श्रेय हमारे अनेक शुभचिंतकों को जाता है, जो हमारे साथ हमेशा खड़े रहे, हमारे सहयोगी भावना से काम करनेवाले लोगों को, जिन्होंने सफलता के लिए कर्मठ होकर कार्य किया, एक व्यक्ति- हमारे प्यारे विनोद सेठी, जिन्होंने हमें उत्साहित किया और इन सबके लिए रास्ता बनाया एवं पवित्र माता को, जिनके आशिर्वाद से कार्य सफल हुआ और होता रहेगा ।

इस शुभ अवसर पर, पत्रिका के पुनः आरम्भ होने की पहली वर्षगांठ पर हम लोग चन्दामामा के विशाल परिवार के सभी सदस्यों को शुभकामनाएँ देते हैं और यह अंक अपने भावी पीढ़ी को समर्पित करते हैं।

बी. विश्वनाथ रेड्डी
प्रकाशक

वेताल
कहानी

राजसम्मान

धुन का पक्का विक्रमार्क पुनः पेड़ के पास गया, पेड़ से शव को उतरा और शव को अपने कंधे पर डाल, यथावत् श्मशान की ओर बढ़ने लगा । तब शव के अंदर के बेताल ने राजा से कहा ''राजन्, तुम्हारा हठ देखते हुए मुझे शंका होने लगी है कि कहीं तुम सनकी तो नहीं हो । किसी की भी सहनशक्ति की एक सीमा होती है, परंतु तुम्हारी सहनशक्ति तो सीमा पार कर गयी है । मैं जितना भी समझाऊँ, तुम समझने का प्रयत्न ही हनीं कर रहे हो । मैंने बारंबार तुमसे कहा कि तुम्हारा जीवना ख़तरे में है, क्योंकि यहाँ खूंख्वार जानवर हैं । किसी भी क्षण वे तुमपर आक्रमण कर सकते हैं और तुम्हारी मृत्यु का कारण बन सकते हैं। इस श्मशान में स्वच्छंद घूम-फिर रहे

हो, मानों तुम्हारा कोई कुछ बिगाड़ ही नहीं सकता। अपने राज्य वापस जाने का नाम ही ले नहीं रहे हो । शायद तुम यह भी भूल गये हो कि तुम एक राजा हो और राजा होने के नाते तुम्हारे कुछ निश्चित धर्म हैं । कहीं ऐसा तो नहीं कि तुम्हारे राज्य में अशांति फैली हुई है, वहाँ की परिस्थितियों का सामना करने की शक्ति तुममें नहीं रही । मेरी बात मानो और अपने राज्य लौटो। राजा शंतनु को भी ऐसी ही परिस्थितियों का सामना करना पड़ा था । उसे एक दिन अचानक लगा, मानों उसे उसकी समस्याओं का परिष्कार मार्ग मिल गया । परंतु यह केवल उसकी आत्म-वंचना थी, उसका भ्रम मात्र था । उसकी कहानी अपनी थकावट दूर करते हुए मुझसे सुनो ।'' फिर बेताल शंतनु की कहानी सुनाने लगा।

बहुत पहले की बात है । शंतनु विदर्भ देश का राजा था । उस समय राज्य फला-फूला था, हरा-भरा था, किन्तु धार्मिक झगड़ों के कारण अशांत था । शिव भक्त और विष्णु भक्त छोटी-छोटी सी बात को लेकर परस्पर लड़ते-झगड़ते थे । एक-दूसरे के मंदिर तोड़ते थे और एक-दूसरों की संपत्तियों पर अपना आधिपत्य जमाते थे । ऐसा नहीं हो पाया तो वे उनका ध्वंस कर डालते थे । कभी-कभी तो बात यहाँ तक बढ़ जाती थी कि वे दूसरे को मार डालने से भी हिचकिचाते नहीं थे ।

शंतनु को यह जानने में देर नहीं लगी कि धार्मिक झगड़ों का सिलसिला इसी प्रकार ज़ारी रहा तो राज्य कमजोर पड़ जायेगा और शत्रु राजा इस अवसर का लाभ उठायेंगे । मंत्रियों से सलाह मांगी तो उनमें से शिवभक्तों ने सलाह दी कि वैष्णव भक्ति निषिद्ध की जाए । विष्णु भक्त मंत्रियों ने यहाँ तक कह दिया कि राज्य में शिव नाम का उच्चारण ही न हो । राजा जान गया कि धार्मिक भेद-भाव मंत्रियों में भी घर कर गये हैं तो वह चिंताग्रस्त हो गया ।

विवेकवती, शंतनु की पत्नी थी । पति की चिंता का कारण जानने के बाद उसने पूछा ''प्रभु, मैं जान सकती हूँ कि आप शिवभक्त हैं या वैष्णव भक्त?''

''मैं देशभक्त हूँ । मेरी जनता उन दोनों भगवानों की पूजा कर रही है, इसलिए वे दोनों भगवान मेरे आराध्यदेव हैं ।'' शंतनु ने कहा ।

''हमारे पुराण घोषणा करते हैं कि भले ही उन दोनों के रूप अलग-अलग क्यों न हों, वे दोनों एक हैं और भगवान एक ही है । शिव के रूप विष्णु की और विष्णु के रूप में शिव की आराधना करना हमारा संप्रदाय रहा है । शिव केशव एक हैं, इस सत्य को साबित करने के लिए कहीं-कहीं हर हर नाथ के मंदिर भी मौजूद हैं । आजकल उनकी देखभाल नहीं हो रहीं है । आप हरिहरनाथ की

श्रेष्ठता का प्रचार कीजिये । जनता में उस प्रचार को फैलाइये । इससे उनके विचारों में, उनकी दृष्टि में परिवर्तन की संभावना है ।'' विवेकवती ने उपाय सुझाया ।

शंतनु ने मुस्कुराकर कहा ''जनता को यह समझाना कोई कठिन काम नहीं है कि हरि हर अलग-अलग नहीं है, बल्कि एक हैं । किन्तु कुछ स्वार्थी लोग धर्म के नाम पर जनता को भड़का रहे हैं । वे धार्मिक एकता की स्थापना के मार्ग में बाधाएँ डाल रहे हैं । हो सकता है, वे मुझे धर्म-द्रोही ठहराकर जनता को ऐसे ही विरुद्ध भड़काएँ । उस परिस्थिति में अपनी रक्षा करने के लिए मुझे सेना-बल का उपयोग करना पड़ेगा । उनके दमन के लिए हिंसा का मार्ग चुनना पड़ेगा । और मैं कदापि यह नहीं चाहता । रक्त बहाना मेरे सिद्धांतों और आदर्शों के विरुद्ध है ।''

''आप प्रजा के बीच में राजा शंतनु बनकर मत जाइये । हरिहरनाथ के नाम पर एक योगी बनकर उन्हें उपदेश दीजिये ।'' विवेकवती ने कहा ।

''स्वार्थपूरित शक्तियाँ जब महाराज के विरुद्ध ही लोगों को भड़काने की कोशिशें कर रही हैं तो क्या वे एक योगी की परवाह करेंगे, असलियत जानने पर क्या राज्य भर में खलबली मच नहीं जायेगी?'' राजा ने प्रश्न किया ।

विवेकवती के पास इस समस्या के निपटारे के लिए एक उपाय है । उसके छुटपन में एक मुनि राजा के अंतःपुर में आया था । उसने बड़ी श्रद्धा-भक्ति के साथ उस मुनि की सेवाएँ की थीं । जाते-जाते मुनि ने उसे एक अंगूठी दी और कहा ''इसे जो पहनेंगे, उसपर अस्त्र-शस्त्र का कोई प्रभाव नहीं होगा, प्राकृतिक शक्तियाँ भी अपना कोई प्रभाव दिखा नहीं पायेंगीं । परंतु हाँ, इसका उपयोग
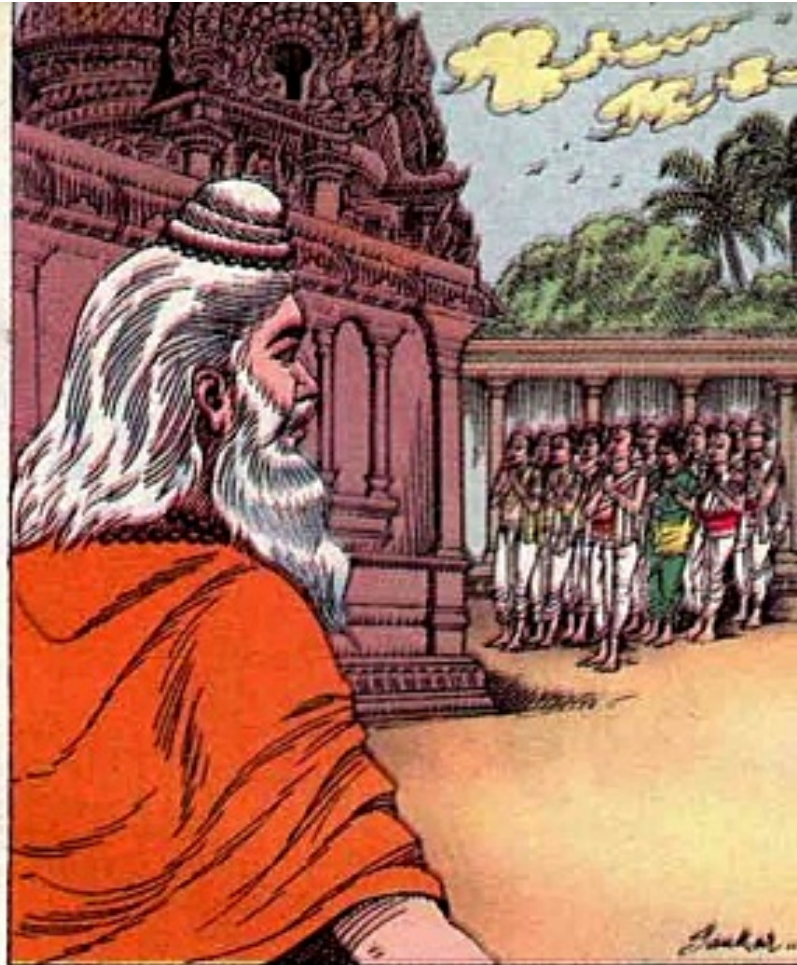
लोकोपकार के लिए करने पर ही यह अंगूठी अपना प्रभाव सिद्ध कर सकती है ।''

''मैंने अब तक उस अंगूठी को पूजा मंदिर में सुरक्षित रखा । अब इसका उपयोग प्रजा-मंदिर में हो । वह समय अब आसन्न हो गया ।'' कहती हुई वेदवती वह अंगूठी ले आयी और राजा को दिया ।

उस अंगूठी को अपनी उंगली में डालते ही राजा योगी के रूप में बदल गया । उसने रानी की भरपूर प्रशंसा की और आत्मविश्वास के साथ जनता के बीच गया । राजा हरिहरनाथ के प्रचार-कार्य में लग गया । लोगों को उपदेश देने लग गया । कहने लगा कि शिव और विष्णु अलग-अलग नहीं हैं, एक ही भगवान के दो नाम हैं । दुष्टों की बातें सुनकर लोग उसपर पथ्थर फेंकने लगे । तरह-तरह से उसकी हिंसा करने लगे । जिस प्रकार प्रह्लाद पर हिरण्यकश्यप से किये गये प्रहारों का कोई प्रभाव नहीं पड़ा, उसी प्रकार गुमराह जनता उसका कुछ

बिगाड़ न सकी । किन्तु जनता थोड़े ही हिरण्यकश्यप जैसे दुष्ट हो सकते हैं । शीघ्र ही उनमें परिवर्तन आया । वे शिव विष्णु की पूजा समान रूप से करने लगे । यों स्वार्थियों का खेल ख़तम हो गया । उन्होंने अपनी हार मान ली ।

शंतनु की अपनी जीत पर बड़ी खुशी हुई । परंतु इस बीच एक घटना घटी । जब वह एक निर्जन प्रदेश से होते हुए राजधानी लौट रहा था तब एक युवक ने उसपर हमला किया । बलवान राजा ने देखते-देखते उस युवक को अपने अधीन कर लिया और कहा "मैं हरिहरिनाथ हूँ, भगवान की कृपा से मुझे अमोघ शक्तियाँ उपलब्ध हुई हैं । योगी हूँ । इस सत्य की जानकारी के अभाव में तुमने मुझपर धावा बोल दिया । फिर भी मैं तुमसे नाराज़ नहीं हूँ। इतना कह दो कि तुमने मुझपर क्यों हमला किया?"

उस युवक ने तिरस्कार भरी दृष्टि से शंतनु की ओर देखते हुए कहा "जानबूझकर ही मैंने तुमपर हमला किया । मैं जानता हूँ कि तुम कौन हो और तुम्हारा क्या लक्ष्य है । योग के द्वारा महिमायें पायी जा सकती हैं । उन महिमाओं के द्वारा जनता को सही मार्ग पर लाया जा सकता है । किन्तु तुमने अपनी महिमाओं का दुरुपयोग किया । हमारे देश में जो अराजकता फैली है, उसका कारण है दैव भक्ति । किसी भी देश को फला-फूला होना हो तो इसके लिए चाहिये नास्तिकता । तुमने लोगों की दैवभक्ति का मार्ग तो मोड दिया, परंतु उनमें दैवभक्ति नामक जो मूर्खता घर कर गयी है, जम गयी है, उससे उन्हें बचा नहीं सके । यह तुम्हारी जीत नहीं, हार है ।"

शंतनु ने कहा "इस विश्व भर में अधिकाधिक लोग आस्तिक हैं । दैवभक्ति एक अद्‌भुत विश्वास है । विश्व भर में दैवभक्ति के नाम पर कितने ही सत्कार्य हो रहे हैं । मानता हूँ कि दैवभक्ति जब मूढभक्ति में बदल जाती है तब लोगों के हृदयों से मानवता की भावना दूर हो जाती है । उनमें और पशुओं में कोई फ़रक़ नहीं रह जाता । इसलिए मेरा विश्वास है कि ऐसे समय पर उन्हें सही मार्ग पर ले आना ही हमारा कर्तव्य है और वही हमारा लक्ष्य भी हो । इसी विश्वास के बल पर मैंने प्रचार भी किया । तुम भी मेरी ही तरह प्रचार करोगे तो तुम्हारा भला होगा ।"

तब उस युवक ने अपना एक काव्य पढ़कर सुनाया । शंतनु ने बहुत ही संतुष्ट होकर कहा "तुमने एक उत्तम काव्य की रचना की । राजा को सुनाओगे तो तुम्हारा सत्कार करेंगे ।"

इसके बाद दोनों अलग हो गये । राजधानी लौटने के बाद राजा ने रानी को अंगूठी लौटा दी । एक दिन जब वह दरबार में सिंहासन पर आसीन
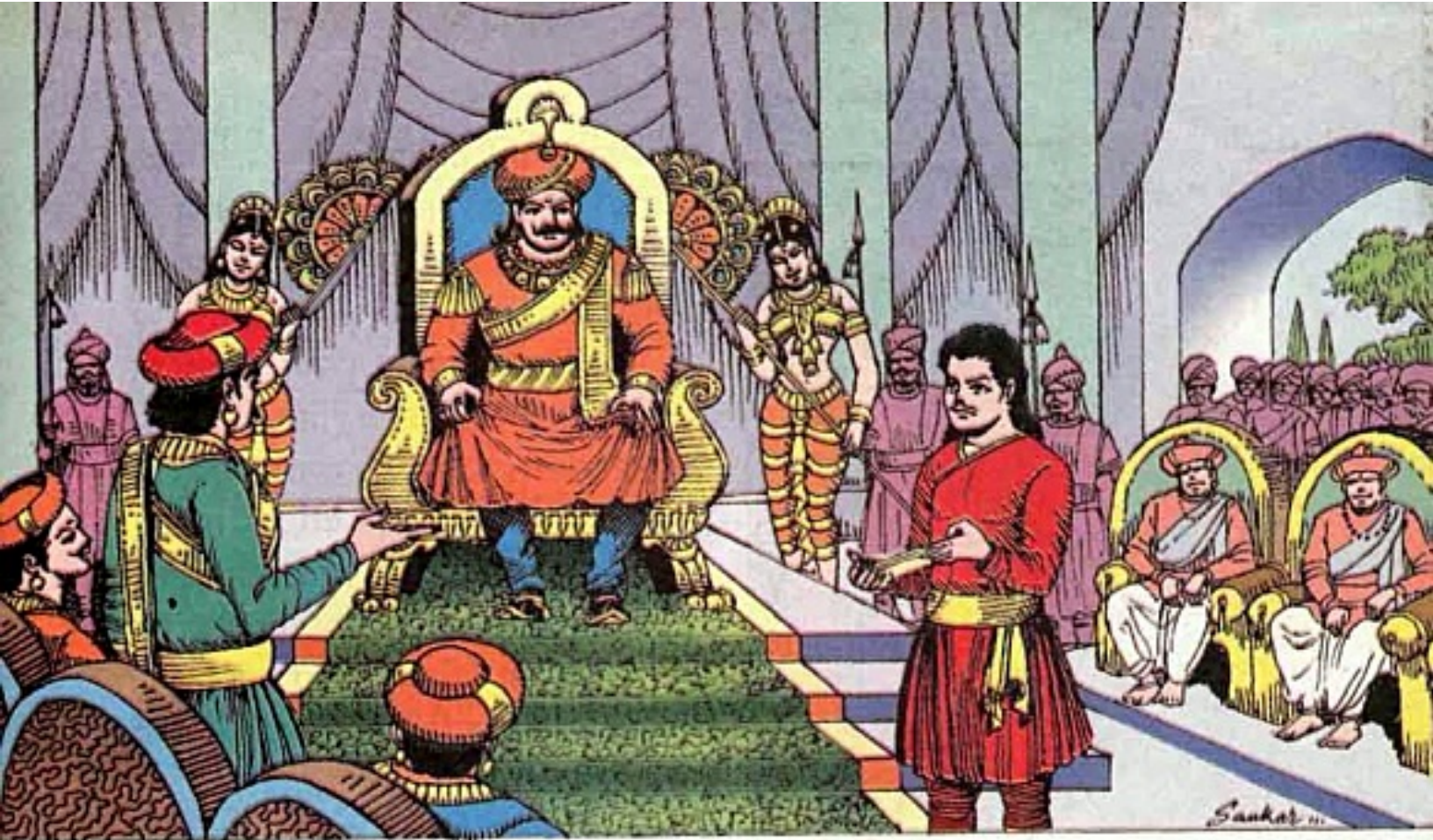
था, तब वह नास्तिक युवक वहा आया । राजा की अनुमति लेकर भरी सभा में उसने अपना काव्य पढ़कर सुनाया । सभासदों ने उसकी प्रशंसा में तालियाँ बजायीं । शंतनु ने भी उसकी प्रशंसा करते हुए कहा "पुत्र, तुम एक प्रतिभाशाली कवि हो । तुम्हारा काव्य दस हज़ार अशर्फ़ियाँ प्राप्त करने की योग्यता रखता है ।"

इतने में मंत्री ने हस्तक्षेप करते हुए कहा "महाराज, यह सच है कि इस युवक का काव्य महान है । किन्तु इसमें भगवान पर व्यंग्य-भरे कटाक्ष हैं, भगवान का कहीं-कहीं दोषी ठहराया गया है । हमारे देश के आस्तिक इससे सहमत नहीं होंगे । इसे पढ़ने पर उनके दिलों को दुख पहुँचेगा । अतः इस काव्य का राज-सम्मान नहीं हो सकता ।"

शंतनु ने मंत्री के तर्क के समर्थन में केवल सिर हिलाया और उस युवक से उससे एकांत में मिलने को कहा । दोनों जब एकांत में मिले तब शंतनु ने उस युवक से कहा "निःसंदेह ही तुम्हारा काव्य उत्तम है । अपने विचारों और विश्वासों का प्रचार तुम करना चाहते हो तो मैं तुम्हें महिमाएँ सौंपने में आनाकानी नहीं करूँगा । परंतु याद रखना कि उस महिमा का उपयोग केवल लोकोपकार के लिए होना चाहिये, न कि अपने स्वार्थ के लिए ।"

युवक ने अस्वीकार करते हुए कहा "सभी योगी नहीं बन सकते । लोकोपकार से मेरा क्या प्रयोजन? ऐसे अनेकों और काव्यों की रचना करना चाहता हूँ । इस देश में मेरे काव्य को राजा का आदर मिले तो और अनेकों काव्य भी रच सकता हूँ । अथवा मेहनत करके जीते हुए इन काव्यों के बारे में भूल जाना ही श्रेयस्कर होगा ।"

तब शंतनु ने उसे एक चित्र देते हुए कहा "नगर के आभूषणों के व्यापारी रत्नाकर को यह चित्र दो । वह तुम्हें दस हज़ार अशर्फ़ियाँ देगा । फिर और काव्य लिखकर मेरे पास ले आना । उस
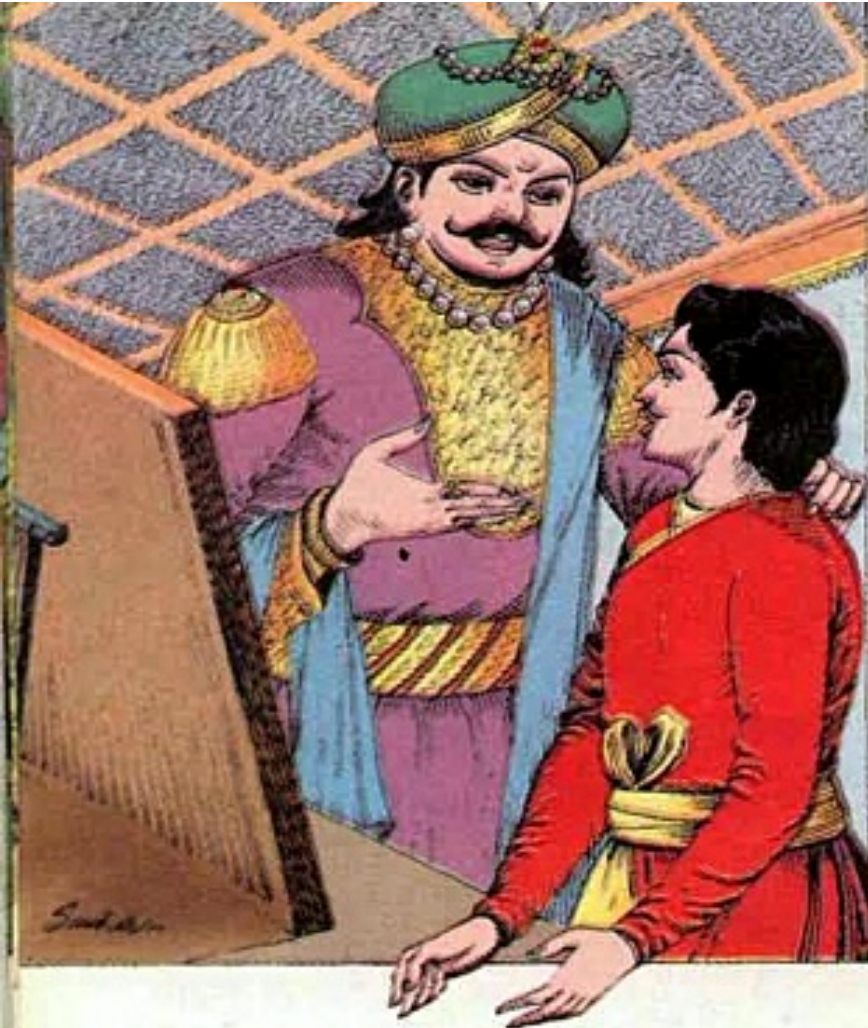
समय तक एक और चित्र बनाकर तैयार रखूँगा । परंतु याद रखना कि रत्नाकर को किसी भी हालत में यह राज़ मालूम न हो कि यह मेरा बनाया हुआ चित्र है ।''

युवक ने आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा ''महाराज, आपको चित्र बेचकर मुझे धन देने की क्या आवश्यकता है? क्या खज़ाना खाली है? कवि और कलाकारों का सम्मान करने की रीति क्या इस देश में नहीं है?''

शंतनु ने हँसकर कहा ''कवियों और कलाकारों को सम्मानित करने की रीति हमारे देश में है । किन्तु देश का मतलब राजा नहीं है, प्रजा है । प्रजा प्रतिनिधि होने के नाते, मैं प्रजा के निर्णयों को मानता हूँ, उन्हें अमल में लाता हूँ । तुम्हारे काव्य को प्रजा का आदर प्राप्त नहीं हुआ, अतः तुम राजसम्मान के योग्य ठहराये नहीं गये । जब तक अपने विचारों को तुम दूसरों पर नहीं थोपेगे तब तक तुम्हें अपने विचारों को व्यक्त करने की पूरी आज़ादी है । मैं थोड़े ही तुम्हारे काव्य का बहिष्कार कर रहा हूँ । सचमुच ही तुम्हारा काव्य मुझे अच्छा लगा । इसलिए फुरसत के साथ जो काम मैं करता हूँ, उससे जो धन मिलता है, उससे मैं तुम्हारा सम्मान कर रहा हूँ । रत्नाकर कलाप्रिय है । वह ऐसे चित्रों को बहुत पसंद करता है । अगर उसे मालूम हो जाए कि इस देश के राजा ने यह चित्र खींचा, तब वह इसका अधिक मूल्यांकन करेगा । मैं चाहता हूँ कि वह इसका सही दाम दे, इसीलिए मैंने मेरा नाम पोशीदा रखने के लिए कहा था ।''

तब उस युवक ने दोनों हाथ जोड़कर कहा ''महाराज, मैं कल्पना भी नहीं कर पाया कि एक महाराज इतने आदर्शवान हो सकते हैं । नास्तिक मैं, अब आप में भगवान को देख रहा हूँ । अब से मैं किसी सम्मान की आशा नहीं रखूँगा । आगे से आप ही मेरे आदर्श हैं । अपना पोषण स्वयं करूँगा ।''

शंतनु ने उसके कंधे पर हाथ डालते हुए कहा ''जनता मूर्खता के बहाव में वह न जाए, इसके लिए तुम जैसे कवियों के काव्यों की सख्त ज़रूरत है । तुम जैसे लोगों का सम्मान नहीं कर पाऊँगा । तो मुझ जैसे लोगों को चित्र खींचने की प्रेरणा कहाँ से मिलेगी? किसी भी कला का प्रयोजन होना आवश्यक है । मेरी कला तुम्हारे काव्य की रचना को प्रोत्साहन देगी । तुम मुझमें भगवान को देख सकोगे तो तुम्हारे काव्य से मानव कल्याण होगा । यह चित्र ले जाओ । रत्नाकर चित्रकार का नाम बताने पर तुम पर दबाव भी डाले तो चुप ही रहना । किसी भी हालत में मेरा नाम मत बताना ।

युवक ने नम्रतापूर्वक कहा ''प्रभु, भरी सभा में महाराज के नाते आप मेरा सम्मान नहीं कर पाये। किन्तु इस सम्मान को राजसम्मान से भी श्रेष्ठ मानता हूँ। आपकी दी हुई सूचनाओं व सलाहों के अनुसार जीवन-पथ पर आगे बढूँगा। मुझे पूरा विश्वास है कि किसी दिन सभा में भी आप ही के हाथों पुरस्कार पाऊँगा।''

बेताल ने यह कहानी सुनाने के बाद कहा ''राजन्, शासन चलाना तलवार की धार पर चलने के समान है। राज्य में विविध विश्वास रखनेवाले होते हैं। आस्तिक और नास्तिक अपने-अपने वादों को ही सही समझते हैं। आपस में वे झगड़ते ही रहते हैं और यह कोई अस्वाभाविक विषय नहीं है। सारा जग मानता है कि राजा को ऐसी स्थिति में कई दिक्कतों का सामना करना पड़ता है। उसे चाहिये कि वह ऐसे लोगों से सख्त पेश आये। ज़रूरत पड़े तो उन्हें कड़ी सी कड़ी सज़ा भी देनी चाहिये। ऐसा न करके अच्छी-अच्छी बातें करके, उपदेश देकर उन्हें बदलना क्या संभव है? अगर यह संभव भी हुआ तो यह विजय क्षणिक है। ऐसे लोग किसी भी क्षण अपना अविश्वास प्रकट कर सकते हैं और विद्रोह करने पर आमादा हो सकते हैं। ऐसी तात्कालिक विजयों का विश्वास करके शंतनु ने ग़लत समझ लिया कि उसने आसानी से समस्याओं का परिष्कार कर दिया। मैं तो कहूँगा कि यह केवल उसका भ्रम मात्र है। यह तो आत्मवेत्तना हुई न? अपने आपको धोखा देना हुआ न? मेरे इन संदेहों के समाधान जानते हुए भी चुप रह जाओगे तो तुम्हारा सिर टुकडों में फट जायेगा।''

विक्रमार्क ने कहा ''मानव समाज चेतनारहित तथा परिवर्तनहीन नहीं है। परिणाम एवं परिवर्तन उसके सहज लक्षण हैं। अतः राजा को चाहिये कि तत्कालीन परिस्थितियों को दृष्टि में रखकर व्यवहार करे और समस्याओं का परिष्कार करे, लोगों के पारस्परिक झगड़ों को दूर करे। विवेकी शंतनु ने यही काम किया। दंड देने की नीति समस्या के परिष्कार का मार्ग नहीं है। व्यक्तियों के बीच, धर्मों के बीच ये विषमताएँ सदा रहेंगी। यह समझना केवल भ्रम है कि ऐसी समस्याओं का शाश्वत परिष्कार होगा।''

राजा के मौन-भंग में सफल बेताल शव सहित गायब हो गया और पुनः पेड़ पर जा बैठा।

आधार 'वसुँधरा' की रचना
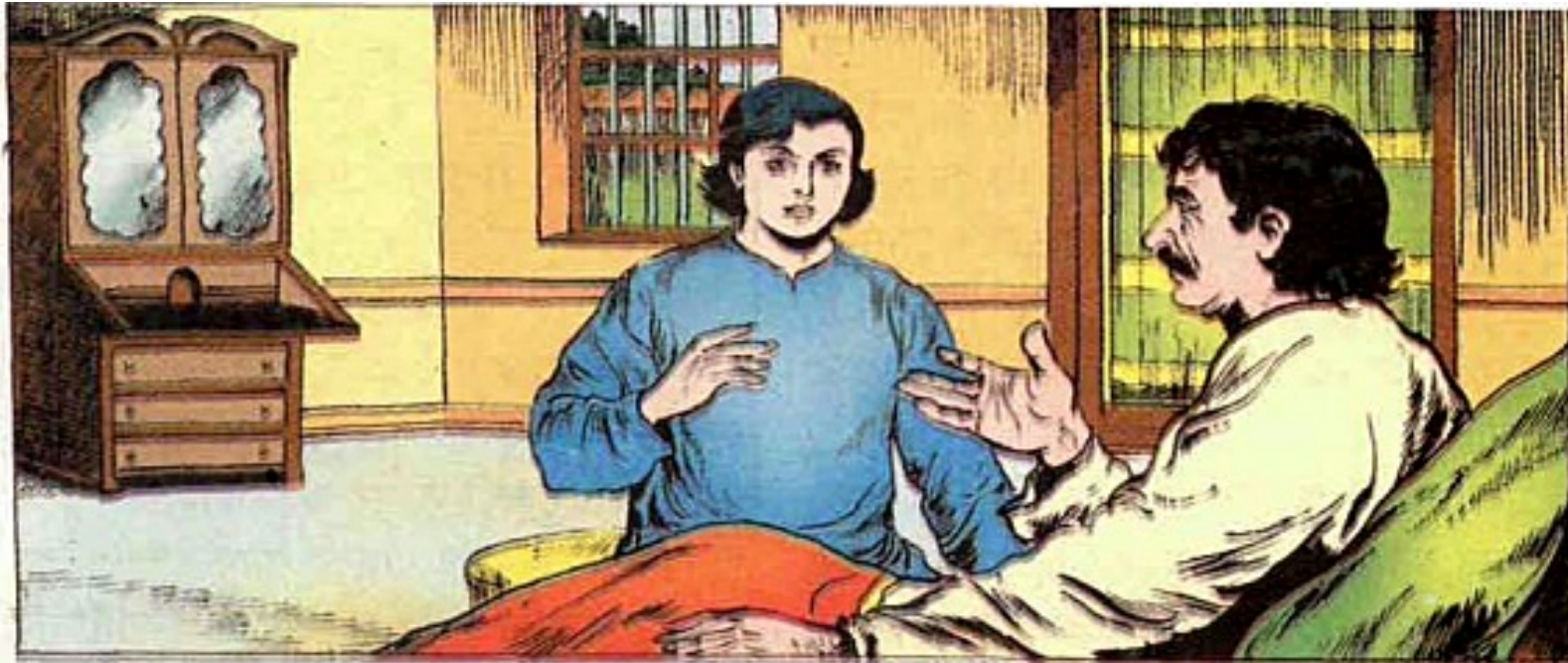
भाग्यवान

गोपालनगर एक छोटा-सा गाँव है । बहुत पहले वहाँ रसीला नामक एक व्यापारी रहा करता था । भाग्यवर्मा उसका बेटा था । उसके जन्म से लेकर रसीले के व्यापार में पर्याप्त वृद्धि हुई थी। वह प्रमुख व्यापारी माना जाने लगा । किन्तु भाग्यवर्मा के यौवन में प्रवेश करते-करते सब कुछ उलटा-पलटा हो गया । रसीले की पत्नी अकस्मात् मर गयी । समुद्री व्यापार के लिए गये उसके सभी जहाज़ डूब गये । पड़ोसी राज्यों में बिक्री के लिए जो वस्तुएँ भेजी गयी थीं, उन्हें अरण्य मार्ग में लुटेरों ने लूट लिया । यों रसीले का सब कुछ जाता रहा और वह निर्धन हो गया। इन आघातों ने उसे रोग-ग्रस्त कर दिया ।

मरने के पहले उसने अपने पुत्र भाग्यवर्मा को बुलाया और उससे कहा ''बेटे, तुम्हारे जन्म के बाद मेरे व्यापार में अप्रत्याशित वृद्धि हुई । इसीलिए मैंने तुम्हारा नाम भी भाग्यवर्मा रखा । किन्तु हमारी वर्तमान स्थिति बड़ी ही गंभीर है । हमने सब कुछ खो दिया । मेरी समझ में नहीं आता कि भगवान ने हमारे साथ ऐसा अन्याय क्यों किया? मैं जान नहीं पा रहा हूँ कि किस पाप के लिए हमें यह दंड भुगतना पड़ रहा है । लगता है, मेरी मौत के दिन भी उंगलियों पर गिने जा सकते हैं । मैं तुम्हें अनाथ बनाकर मरने जा रहा हूँ । तुम्हारे भविष्य पर सोचते हुए मुझे अपार दुख हो रहा है । किन्तु क्या करूँ? विवश हूँ'' आँखों में आँसू भरते हुए उसने कहा ।

भाग्यवर्मा ने अपने पिता को ढाढ़स बंधाया और कहा ''नारियल में जिस प्रकार से पानी भर आता है, उसी प्रकार संपत्ति भी आती है । वह देखते-देखते आँखों से ओझल हो जाती है । जब आंधी आती है, फ़सल हानि हो जाती है । इससे किसान को अपार हानि पहुँचती है। अगर

संदीप

वह वरुणदेव व भूदेवी पर नाराज़ होकर चुप बैठ जाए और खेती न करे तो वह जीयेगा कैसे? अपने परिवार को संभालेगा कैसे? यह बात व्यापार के विषय में भी लागू होती है । व्यापार में नुक़सान हो तो व्यापारी को हताश होकर चुप नहीं बैठना चाहिये । उसे अपने प्रयत्न जारी रखने चाहिये । आपने बड़े प्यार से मेरा नाम रखा भाग्यवर्मा । भविष्य ही यह बता पायेगा कि मैं इस नाम के योग्य हूँ या नहीं । बस, मुझे आशीर्वाद दीजिये कि मैं अपने प्रयत्नों में सफल होऊँ ।''

रसीले ने अपने पुत्र के आत्मविश्वास की प्रशंसा करते हुए कहा ''यह कोई ज़रूरी नहीं कि तुम इसी गाँव में व्यापार करते रहो और यह भी कोई जरूरी नहीं कि मैंने जो व्यापार किया, वही व्यापार तुम भी करो । किसी भी वस्तु को बेचकर व्यापार किया जा सकता है । पहले मैं छोटी-छोटी नावों में आनेवाली सामग्री पर चुंगी वसूली का काम किया करता था । चक्रधर नामक मेरे दोस्त से मिलो । उसी ने मुझे वह नौकरी दिलवायी थी । तुम्हें भी वह नौकरी दिलवायेगा । यह नौकरी तुम निःसंकोच करो। मेरी आत्मा सदा तुम्हारे ही साथ रहेगी ।''

रसीले के मर जाने के बाद भाग्यवर्मा, चक्रधर से मिला । उसकी कितनी ही छोटी-छोटी नावें थीं। व्यापारी, सामग्री को अन्य जगहों पर पहुँचाने और उन्हें बेचने में इनका उपयोग करते थे । बिक्री और बेचे गये माल के आधार पर चुँगी वसूली जाती थी । इसे वसूल करने के लिए कुछ लोग नियुक्त किये जाते ।
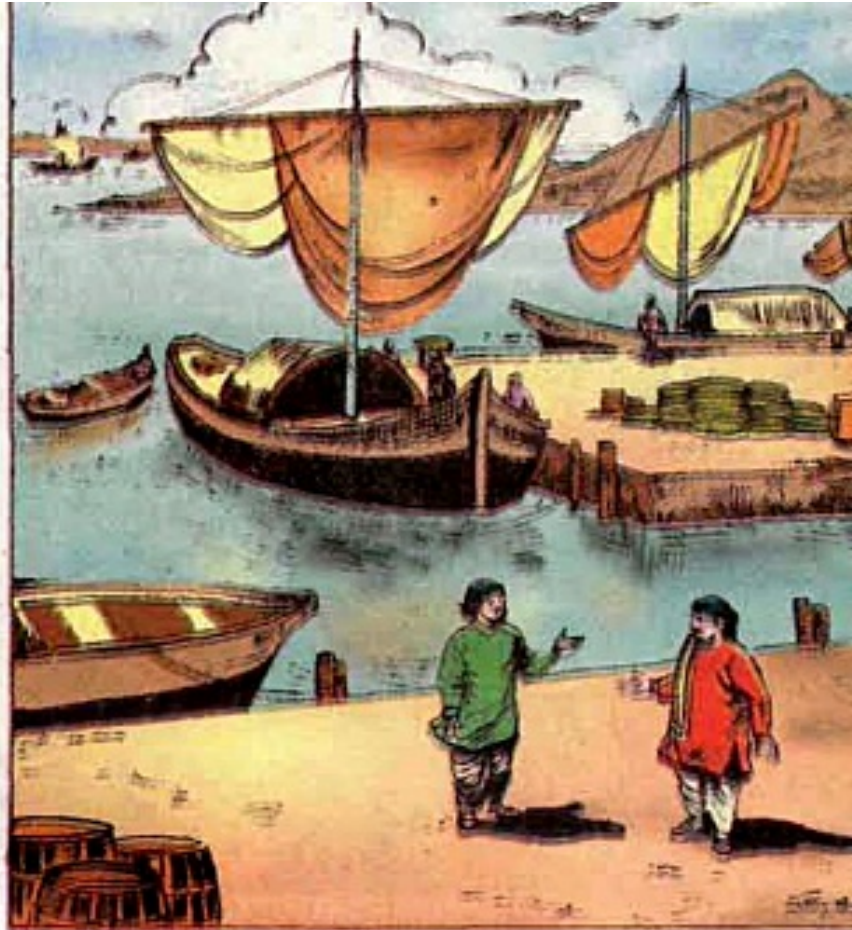
वसूल की गयी रक़म में से जो रक़म सरकार को मिलनी चाहिये, वह ख़जाने में भरी जाती थी । और यह सारा काम चक्रधर संभालता था ।

चक्रधर ने भाग्यवर्मा को प्यार से देखते हुए कहा ''मैंने इसमें जो लाभ कमाया, उससे कुछ नावें खरीदी । तुम्हारे पिता ने भी ऐसी ही कमाई से व्यापार शुरू किया और बड़ा व्यापारी बना । करोड़ों रुपये कमाए। इसी तरह हमने जीवन में तरक्की की। तुम मेरे मित्र के बेटे हो । तुम्हें मैं यह नौकरी दिलाना नहीं चाहता । मैं तुम्हें कर्ज़ में पर्याप्त धन दूँगा । इस धन से व्यापार करो, कमाओ । अपना पूर्व वैभव पाओ ।'' मैं हर समय पर तुम्हारा साथ दूँगा।''

भाग्यवर्मा ने हाथ जोड़कर प्रणाम करते हुए कहा ''बड़ों ने कहा है कि जहाँ खोया, वहीं ढूँढ़ो । मैं पिताजी की आज्ञा का पालन करना चाहता हूँ । मेरे पिताजी का आशीर्वाद ही मेरे

लिए पूँजी है । मेरा विश्वास है कि जो नौकरी मेरे पिताजी ने की, उसी नौकरी के द्वारा फिर से मेरा भाग्य चमकेगा । यही नौकरी मुझे दिलाइये। इसी को आपका दिया कर्ज़ मानूँगा। आपके दोस्त की भी यही इच्छा थी।''

चक्रधर ने भाग्यवर्मा की इच्छा के अनुसार ही उसे नौकरी दिलवायी । यों कुछ माह बीत गये ।

एक दिन नाव पर तीन पेटियाँ लायी गयीं । उसके मालिक ने पेटियाँ खोलीं और भाग्यवर्मा को दिखाते हुए कहा ''साहब, ये खाली पेटियाँ हैं । नियमानुसार इन्हें चुँगी चुकानी है । किन्तु ये खाली पेटियाँ हैं । इसलिए मैं नहीं समझता कि इन पर चुँगी चुकाने की ज़रूरत है !''

भाग्यवर्मा ने पेटियों की बखूबी परीक्षा की और कहा ''एक-एक पेटी में तीन मन की सामग्री भरी जा सकती है । इन पेटियों को बेचने पर भी कमाई हो सकती है ।''

पेटियों के यजमान ने दीन स्वर में कहा ''कृपया मेरी विनती पर ध्यान दीजिये । बहुत पहले की बात है, व्यापार करने बहुत सामग्रियों के लिये व्यापारियों का एक कारवां जंगल में गुज़र रहा था । मैं उस कारवाँ में एक नौकर मात्र था । जंगल में लुटेरों ने उस कारवाँ को लूटा लिया। जान पर खेलकर हम उनसे भिड़ गये, लेकिन कोई फ़ायदा नहीं हुआ । मैं बेहोश होकर गिर पड़ा । गधे पर लदी ये तीनों पेटियाँ तितर-बितर पड़ी हुई थीं । मैंने इधर-उधर ढूँढ़ा, इस उम्मीद को लेकर कि कोई मूल्यवान चीज़ मिल जाए । वहाँ ये खाली पेटियाँ मात्र मिलीं । रास्ते में मैंने व्यापारियों से सुना कि ये तीनों पेटियाँ गोपालनगर के व्यापारी रसीला की पेटियाँ हैं । मैं उन्हें वापस देने निकला हूँ । साथ ही इस उम्मीद को लेकर निकला हूँ कि प्रतिफल स्वरूप वे शायद मुझे अपने यहाँ कोई नौकरी दें । इन पेटियों को बेचने का मेरा कोई विचार नहीं हैं ।''

ये बातें सुनकर भाग्यवर्मा के आँखों में चमक आयी । इसका यह मतलब हुआ कि उसके पिता की ये खाली पेटियाँ उसे वापस मिल गईं। हो सकता है कि इनसे उसका भाग्य चमके। ऐसा सोचकर उसने उस आदमी से कहा ''मैं उन्हीं का बेटा हूँ । तुम्हारी ईमानदारी मुझे अच्छी लगी । अब से मैं तुम्हारी देखभाल करूँगा । भाग्य ने साथ दिया तो व्यापार शुरू करूँगा और तुम्हें अपना ईमानदार नौकर बनाऊँगा ।

पेटियों को लेकर वह चक्रधर के पास पहुँचा और कहा ''यद्यपि इस आदमी ने कहा कि ये पेटियाँ मेरे दिवंगत पिताजी की हैं, फिर भी आपकी अनुमति के बिना मैं इन्हें अपना बनाना नहीं चाहता । आप ही सुझाइये कि कैसे ये पेटियाँ मेरी हो सकती हैं?''

चक्रधर ने उन पेटियों को ध्यान से देखा और आनंद भरित होकर चुटकी बजाते हुए कहा ''वाह, तुम्हारे पिताजी ने ठीक ही कहा था कि उनकी आत्मा सदा तुम्हारे ही साथ रहेगी । उनकी बाते बिल्कुल सच निकलीं । तुम्हारे पिताजी सोने की तरह चमकनेवाले नक़ली आभूषणों का व्यापार करते थे। उन्हें रखने के लिए ही उन्होंने ये पेटियाँ बनवायीं थीं। देखो, हर पेटी में तीन-तीन गोटियाँ हैं । पर लक्ष्मीदेवी की कृपा पाने सोने की पूजा की और गोटियाँ बनवाकर इन पेटियों पर सोना जडवाया । इस पर फैली धूल को हटाओ तो तुम्हें दीखेगा । ये गोटियाँ इनकी रक्षक बनकर तुम्हारे पास ले आयीं । भगवान तुम्हारा भला करें ।''

भाग्यवर्मा ने उन गोटियों को निकलवाया। अब स्पष्ट हो गया कि वे सोने की हैं । तब चक्रधर ने कहा ''तुम्हारे पिताजी के कहे मुताबिक ही ये पेटियाँ तुम्हें उसी जगह पर मिलीं, जहाँ से तुम व्यापार शुरू करने का इरादा रखते हो । यह सोना ही अब तुम्हारी पूँजी है । अपने पिताजी की ही तरह तुम भी यहीं व्यापार शुरू कर दो ।''

भाग्यवर्मा ने आनंदभरित होकर कहा ''मेरे पिताश्री ने आशीर्वाद देते हुए कहा था कि मेरी आत्मा सदा तुम्हारे साथ रहेगी । इस नौकर के रूप में इन पेटियों के साथ वे मेरे पास आये । इसके नाम पर मैं व्यापार शुरू करूँगा । सचमुच ही भाग्य ने मेरा साथ दिया ।''

भाग्यवर्मा ने व्यापार शुरू कर दिया । दो-तीन सालों में ही वह प्रमुख व्यापारी बन गया । चक्रधर उसके व्यापारिक कौशल से बहुत प्रभावित हुआ । अपनी बेटी का विवाह भी उससे करवाया ।

भाग्यवर्मा ने नौकर को अपने पिता का सम्मान दिया । अब दोनों अपने अपने भाग्य से सुखपूर्वक जीवन बिताने लगे ।
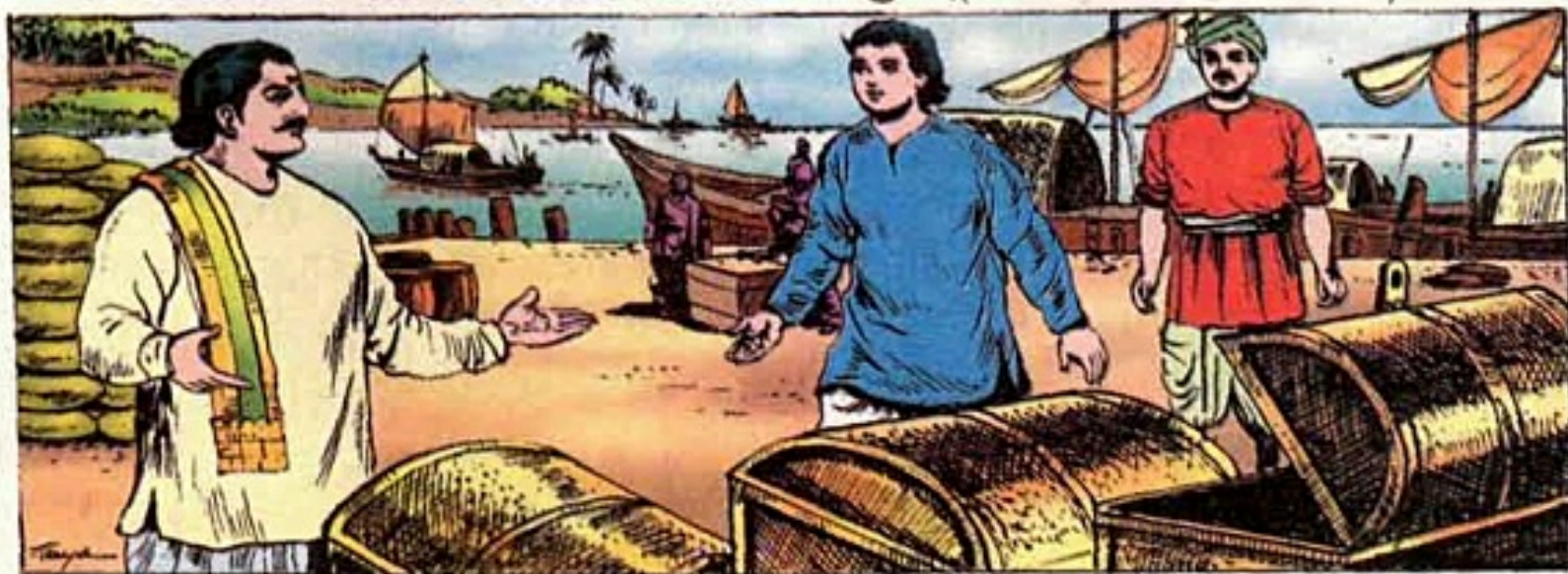
बिन्दुसार की चित्रकारी

बिंदुसार का जन्म ग़रीब परिवार में हुआ। अमीर बनने की उसकी तीव्र इच्छा थी। रात-दिन मेहनत करके उसने धन भी इकट्ठा किया। बुरी आदतों से वह दूर रहता था और अनावश्यक खर्च भी नहीं करता था। इस वजह से उसके पास व्यापार के लिए आवश्यक धन इकट्ठा हो गया। उसने छोटे पैमाने पर व्यापार शुरू किया और क्रमशः बड़े पैमाने पर व्यापार करने लगा। दस सालों के भीतर वह करोड़पति बन गया। उसके परिवार में उसके दो बेटे थे और एक बेटी।

अब बिंदुसार का जीवन आराम से कटने लगा। उसने बेटी की शादी भी करायी और अब वह अपने ससुराल में सुखपूर्वक रह रही थी। दोनों बेटों का भी विवाह हो गया और दोनों व्यापार थे संभाल रहे थे। इस दशा तक पहुँचने के लिए उसने कड़ी मेहनत की। फिर भी उसे चुप बैठे रहना अच्छा नहीं लगता था। खाली बैठते हुए वह अपने को अशांत महसूस करता था। व्यापार से उसे चिढ़ हो गयी थी इसलिए उसने ललित कलाओं का अभ्यास करने का निश्चय किया।

कविता लिखनी या सुनानी हो तो उसमें भाषा के ज्ञान का अभाव था। गीत गाना हो तो उसके कंठ स्वर में माधुर्य नहीं के बराबर था। अब रहा एक ही मार्ग और वह है, चित्रकारी।

एक दिन अपने कमरे में बैठकर उसने तरह-तरह की तस्वीरें बनाईं। अपना एक भी चित्र उसे अच्छा नहीं लगा। उसे लगा कि किसी भी कार्य की पूर्ति के लिए साधना एकाग्रता और तपस्या चाहिए। एक सप्ताह तक उसके प्रयास जारी रहे। आख़िर एक दिन उसने मनपसंद चित्र बनाया। वह चित्र सिंह का था। अपने हाथों से बनाये इस चित्र को देखकर वह खुशी से फूला न समाया। उसे लगा कि निकट भविष्य में वह बहुत बड़ा कलाकार होगा और उसकी काफ़ी प्रसिद्धि होगी।

वह सोचने लगा ''निःसंदेह ही सिंह का चित्र

रघुवंश

मैंने बढ़िया बनाया, परंतु कलाकार को तृप्ति तभी होगी, जब दूसरे उसकी कलात्मक कृति की प्रशंसा करेंगे ।'' इसलिए उसने चाहा कि अन्यों के अभिप्राय भी इसके बारे में जानूँ, उनसे पूछूँ कि ''मेरा यह चित्र, आपको कैसा लगा?'' पर उसे ऐसा करने में संकोच हुआ और चुप रह गया ।

बहुत दिनों तक वह कमरे में ही रहा और यह जाहिर होने नहीं दिया कि कमरे में बैठे-बैठे वह क्या काम कर रहा है । इस वजह से किसी को मालूम नहीं हो पाया कि वह कमरे में क्या कर रहा है। वह भली-भांति जानता था कि चित्रों को दिखाने पर कुछ लोग उसकी झूठी प्रशंसा करेंगे, तो कुछ लोग उसका मज़ाक उड़ायेंगे । सच जानना हो तो किसी को इस बात का पता लगना नहीं चाहिये कि वह चित्र असल में है क्या और इसके चित्रकार कौन हैं?

यों सोचकर उसने उस चित्र को घर के बीचों-बीच एक मेज पर रखा । फिर ऐलान किया कि जो बता सकेगा कि उस कागज में क्या है, उसे सौ अशर्फ़ियाँ पुरस्कार स्वरूप मिलेंगीं ।

पहले पहल बिंदुसार की पत्नी ने वह कागज़ देखा और कहा ''आपके पोते की खींचीं टेढ़ी-मेढ़ी लक़ीरें हैं।'' बिन्दुसार का मन उसकी इस टिप्पणी से दुखी हुआ, पर उसने अपना दुख प्रकट होने नहीं दिया । फिर दोनों बेटों ने उसे देखकर कहा ''ऐसी निरर्थक बातों पर माथापची करने से अच्छा यही होगा कि व्यापार पर दृष्टि केंद्रित करें और ज़्याद कमायें ।'' बिन्दुसार को उनकी इस टिप्पणी पर भी दुःख हुआ ।

इतने में दोनों बहुएँ उधर से गुज़रीं । बड़ी बहू ने मेज़ पर रखे कागज़ को देखकर कहा ''लगता है, किसी ने इसमें कोई संदेश लिखकर रखा है । अक्षर भद्दे हैं, अस्पष्ट हैं, अतः यह शायद पैशाचिक भाषा है ।''

छोटी बहू ने 'न' के भाव में सिर हिलाते हुए कहा ''बड़ी हो, फिर भी तुममें थोड़ी-सी भी

अक़्ल नहीं । कागज़ पर रंग लुढ़क गये हैं, इसलिए तुम्हें ऐसा लगता होगा । परंतु मेरी दृष्टि में न ही यह भाषा है, न ही अक्षर ।'' उसे लगा कि उसकी ये बातें ससुर को अच्छी लगेंगीं ।

बिंदुसार की स्थिति बड़ी ही विचित्र थी । न तो वह रो पाता था, न हँस पाता था । उसने गंभीरतापूर्वक कहा ''लगता है, सौ अशर्फ़ियों को पाने की योग्यता मेरे परिवार के किसी भी सदस्य में नहीं है ।''

इतने में दो नौकर वहाँ आये । एक ने उस कागज़ को देखकर कहा ''यह वह कागज़ होगा, जिसका उपयोग बीज की पोटली बांधने के लिए किया गया हो । कुछ बीजों के चिरक जाने से रंग लग गया होगा ।''

दूसरा नौकर हंस पड़ा और बोला ''तुम्हारी बेवकूफ़ी पर मुझे हंसी आ रही है । अगर यह कागज़ पोटली बाँधने के लिए उपयोग में लाया गया होतो इसमें तहें कहाँ, तो कोई निशान ही नहीं दिखायी देते हैं ।''

उन दोनों की बातों को सुनकर बिन्दुसार में थोड़ी-बहुत आशा जगी । उसने दूसरे नौकर से कहा ''दोनों में से तुम थोड़ा अक़्लमंद लगते हो । तुम्हीं बताना, यह आख़िर है क्या?''

नौकर ने खुश होते हुए कहा ''क्या इतना भी बता नहीं सकता हूँ मालिक? उस कागज़ में थोड़ी देर तक बीज रखे और फिर निकाल दिया । बस, उनकी पोटली नहीं बनायी ।''

''रहने दे अपनी ये अंटसंट बातें । जा, अपना काम कर'' नाराज़ होते हुए बिंदुसार ने कहा ।

दोनों नौकरों के वहाँ से चले जाने के बाद पाँच साल का उसका पोता वहाँ आया । उस कागज़ को देखते ही वह कहने लगा ''दादाजी, दादाजी, किसी ने पेड़ का यह चित्र बहुत अच्छा खींचा । मुझे यह चित्र चाहिये'' चित्र को अपने हाथ में लेकर वह हठ करने लगा । उसकी बातें सुनकर बिंदुसार अति आनंदित हो गया । अपने पोते को पास लेते हुए कहा ''सिंह को पेड़ कह देने से भला क्या फ़रक पड़ेगा । इस कागज़ पर रेखाओंवाला एक चित्र है, कहनेवाले एक मात्र तुम्हीं हो । इसलिए तुम्हीं इस पुरस्कार के हक़दार हो'' पोते को चूमते हुए उसने कहा ।

वहीं खड़ी उसकी पत्नी और बहुएँ खिलखिलाकर हंस पड़ीं क्योंकि अब उन्हें असली बात मालूम हो गयी ।

भूषण की संदूक

भूपालपुर गाँव में कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं था जो ब्याज पर रुपए उधार देने वाले भूषण को न जानता हो । कृषि तथा छोटा-मोटा व्यापार करके अपने परिवार का भरण-पोषण करने वाले ग्रामीणों की आर्थिक दशा अच्छी नहीं थी । इसलिए जब कभी भी उन्हें अतिरिक्त धन की आवश्यकता पड़ती तो वे भूषण के पास जाते । समय पर भूषण उनकी सहायता अवश्य करता था । परन्तु उनकी लाचारी का लाभ उठाकर अधिक ब्याज भी ऐंठने से नहीं चूकता था । गाँव वाले उसकी नियति को अच्छी तरह जानते थे । वे मन ही मन भूषण को कोसते रहते ।

भूषण अपने धन के बारे में कभी किसी को नहीं बताता था । यहाँ तक कि अपनी पत्नी भूदेवी को भी । भूदेवी को इस घर में आए पाँच वर्ष हो गए थे, परन्तु उसके पास एक भी आभूषण नहीं था । भूषण भी इतना पैसा कमाता था, फिर भी फटे-पुराने वस्त्र ही उसके शरीर पर दीखते थे ।

भूषण के घर में पूर्वजों के समय से एक लकड़ी की संदूक रखी थी । जिसमें सदा ताला लगा रहता था । जिसकी चाभी भूषण अपनी कमर में लटका कर घूमता था । उस संदूक के बारे में भूदेवी को मात्र इतना ही पता था कि उसमें धन है - परन्तु कितना धन है, इसका पता उसको नहीं था । वह कभी पति से पूछती भी नहीं ।

एक दिन शुभ कार्य के अवसर पर वह गाँव के मुन्सिफ के घर गयी थी । वहाँ अन्य औरतों द्वारा उसके बारे में की गई टिप्पणियाँ उसने सुनी । जिससे उसको बड़ा दुःख हुआ ।

वे आपस में फुसफुसा रही थीं ''संतान नहीं है, फिर भी दमड़ी-दमड़ी का हिसाब रखती है । स्वादिष्ट खाना भी नहीं खाते । इसके गले में मंगलसूत्र के सिवा कोई दूसरा गहना भी नहीं है। यह भी कोई जीना हुआ ।''

गाँव के पटवारी की पत्नी ने खिलखिलाकर हँसते हुए कहा ''सुना है कि इसके घर में दादा परदादाओं के ज़माने की एक बड़ी संदूक है । मेरी सास कहा करती हैं कि उसकी चाभी इसके पति की करधनी में हमेशा लटकती रहती है । इसका यह मतलब है कि ब्याज की ये लोग कमाई इसी संदूक में सुरक्षित रखते हैं ।''

उसकी ये बातें भूदेवी को बहुत बुरी लगीं । उसे लगा कि जान-बूझकर उसका अपमान किया जा रहा है । उसने उस रात को भूषण से साफ-साफ कह दिया ''इसी क्षण मुझे मालूम होना चाहिये कि इस संदूक में कितना धन है । यदि आपने कहने से इनकार कर दिया तो किसी कुएँ में गिरकर आत्महत्या कर लूँगी ।''

भूषण पत्नी की धमकी की गंभीरता जान गया उसने कहा ''ज़रूर देखना, लेकिन जो देखा, तुम्हें तुरंत भूल जाना होगा ।'' यों कहकर भूषण ने संदूक खोली ।

संदूक के अंदर भरी पड़ीं सोने की अशर्फ़ियों व गहनों को देखकर उसका सिर चकरा गया । वह नाराज़ होती हुई बोली ''यहाँ इतना सोना पड़ा है और मेरे बदन पर एक भी गहना नहीं । भिखारिणी की तरह गलियों में घूमती रहती हूँ । त्यौहार के दिनों में भी वही रोटी और वही दाल। यह भी कोई ज़िन्दगी है?''

''अरी पगली, चिल्लाती क्यों हो? धीरे बोलना। संदूक भर जाए तो इसे लेकर शहर चले जायेंगे । वहाँ जाकर मैं समुद्री व्यापार शुरू करूँगा । फिर तेरे बदन पर गहने ही गहने होंगे।''

''किन्तु यह संदूक भरेगी कब?'' भूदेवी ने पूछा।

''सब उस ऊपरवाले की कृपा पर निर्भर है। मैंने क़सम खा ली है कि जब तक यह भर नहीं जायेगी तब तक इसमें से एक दमड़ी भी नहीं छूऊँगा। भूषण ने यह कहकर संदूक बंद कर दी।

उस रात को भूदेवी ने एक सपना देखा । उस सपने में उसने देखा कि भूषण दो आदमियों की सहायता से उस संदूक को घोड़ा गाड़ी में रख रहा है। दूसरे दिन उसने सपने के बारे में अपने पति से बताया और कहा । लगता है,

हम बहुत ही जल्दी शहर चले जाएँगे ।''

''ऐसा ही हो । धनलक्ष्मी की कृपा रही तो देखते-देखते संदूक सोने से भर जायेगी ।'' भूषण ने कहा ।

वे लोग उस दिन शाम को अष्ट लक्ष्मी मंदिर गये । वहाँ भूदेवी ने देवी से प्रार्थना की कि उसका सपना सच निकले । फिर दोनों मंदिर में दिये गये प्रसाद को एक कोने में बैठकर खाने लगे ।

उस समय वही हट्टे कट्टे व बड़ी-बड़ी मूंछोंवाले दो आदमी वहाँ आये और पुजारी से पूछा ''स्वामी, पतली, मृगनयनी, ओठों पर बड़े तिलवाली सुंदर कोई लड़की यहाँ आयी ?

भूषण और भूदेवी ने उन आदमियों का प्रश्न सुना । पुजारी ने उनसे कहा कि ऐसी कोई लड़की यहाँ नहीं आयी । जब वे निराश होकर लौट रहे थे, तो पुजारी ने उनसे पूछा ''आख़िर वह लड़की है कौन?''

दबे स्वर में उन्होंने पुजारी से कहा ''वह और कोई नहीं । हमारी युवरानी चंद्रलेखा हैं । हाल ही में वे पूर्वी पर्वत प्रांत में विहार करने गयी थीं । वहाँ एक भील युवक से प्रेम हो गया। राजा क्रोधित हो गये और उन्हें खूब गालियाँ दीं। इसी कारण किसी को बताये बिना वे अंतःपुर से भाग गयीं । राजा ने घोषणा की कि जो युवरानी को लायेगा, उसे पचास हज़ार अशर्फ़ियाँ भेंट में दी जायेंगीं । हम उन्हीं को ढूँढने में लगे हैं ।''

''उन पचास हज़ार अशर्फ़ियों से हमारी संदूक भर जायेगी'' भूषण ने कहा । ''तो फिर

देरी क्यों? अभी उसे ढूँढने निकल पड़ो'' भूदेवी ने प्रोत्साहन देते हुए कहा ।

''उस पूर्वी पहाड़ी प्रांत में जाऊँ? नहीं, नहीं, वहाँ तो बाघ, चीते और रीछ स्वच्छंद घूमते रहते हैं'' भूषण ने कहा ।

उस दिन रात को भोजन कर लेने के बाद जब दोनों सोने जा रहे थे तब किसी के दरवाज़ा खटखटाने की आवाज़ आयी । भूषण की समझ में नहीं आया कि इतनी आधी रात को कौन आया । उसने जाकर दरवाज़ा खोला । वहाँ युवरानी को देखकर वह सन्न रह गया । उन आदमियों के कहे मुताबिक ही वह पतली थी, मृगनयनी थी और उसके होंठ पर तिल भी था । उसे लगा कि भाग्यलक्ष्मी ही स्वयं उसका घर ढूँढती हुई आयी हैं। उस युवती ने पूछा ''अकेली हूँ । इस रात को आपके घर में आश्रय मिलेगा?''

"क्यों नहीं । अंदर आइये ।" कहते हुए भूषण उसे अंदर ले गया और एक कमरे में बिठाया। फिर बग़ल के कमरे में सो रही भूदेवी को जगाकर उसने कहा "हमारे सितारे बुलंद हैं। वह युवरानी खुद हमारे यहाँ चली आयी ।"

भूदेवी ने दूर से उसे देखा और संदेह प्रकट करते हुए कहा "विश्वास नहीं होता कि यह युवरानी है । इसके सिर पर मुकुट कहाँ? शरीर पर आभूषण कहाँ?"

"अंतःपुर से भागी युवरानी थोड़े ही आभूषण पहनकर निकलेगी? उसने अपना वेष बदल लिया होगा । मैं अभी घोड़ा-गाडी में निकलता हूँ और राजा को सूचित करके सैनिकों सहित लौटूँगा । कल रात को ही हमारी संदूक भर जायेगी" उसने यों कहा और उसी क्षण घोड़ा-गाड़ी में जाने राजधानी निकल पड़ा ।

घोड़ा-गाड़ी आधी दूरी तक गयी कि नहीं, रुक गयी, क्योंकि आगे बहुत-सी गाड़ियाँ रुकी हुई थीं। नदी में बाढ़ आ गयी थी, इसलिए गाडियों का आगे बढ़ना असंभव था । गाड़ीवाले ने निराशा-भरे स्वर में कहा "हमें यह रात यहीं बितानी होगी ।"

यह सुनकर भूषण को लगा, मानों उसके सिर पर बिजली गिरी हो । सबेरे तक वह घर नहीं लौटेगा तो शायद युवरानी घर से चली जायेगी । उसने सोचा, वापस लौटे और युवरानी के कमरे को बाहर से ताला लगा दे।

भूषण गाड़ी में ही लौटा और घर पहुँचा । देखा कि घर के दरवाज़े खुले हैं । वह घबराता हुआ अंदर गया । देखा कि एक कमरा बाहर से बंद है । अंदर से भूदेवी का हाहाकार सुनाई पड़ रहा था।

भूषण ने दरवाज़ा खोला तो देखा कि भूदेवी

रस्सियों से बंधी हुई है । उसने तुरंत उसे रस्सियों से मुक्त किया और आतुरता भरे स्वर में पूछा ''युवरानी कहाँ है? क्या हुआ?''

''वह युवरानी नहीं है । चोरों की रानी है । मैं झपकी ले रही थी तो उसने जाकर दरवाज़ा खोला । मंदिर में जिन दो हट्टे-कट्टे और बड़ी-बड़ी मूँछवाले आदमियों को हमने देखा, वे हमारी संदूक के बारे में सब कुछ जानते होंगे । वे चोरों की रानी के साथ अंदर आये, मुझे रस्सियों से बांधकर इस कमरे में ढकेल दिया और संदूक ले गये ।'' भूदेवी ने कहा ।

पत्नी की बातें सुनते ही वह सिर को पीटते हुए ज़मीन पर बैठ गया । भूदेवी ने उसे पानी पिलाते हुए कहा ''इतना दुखी क्यों होते हो? इतनी बड़ी संदूक के होते हुए भी हमने गरीबी से भरी ज़िन्दगी ही बितायी । यही समझकर शांत जीवन बिताएँ कि वह संदूक अब भी अपने ही घर में है । इसके सिवा कोई दूसरा चारा भी तो नहीं है ।''

भूषण ने आँसू भरी आँखों से भूदेवी को देखा और कहा ''भूदेवी, तुम प्राचीन काल की स्त्री की तरह पतिव्रता हो । तुमने यह तो नहीं कहा कि आखिर इस घर में रखा ही क्या है, मायके चली जाऊँगी । तुम्हारी बातों से तुम्हारा अच्छा और सच्चा मन झलकता है । तुम्हारी तारीफ़ जितनी भी करूँ, कम है । पर तू निश्चित रह । जितनी रक़म हमें लोगों से मिलती है, वसूल करूँगा और कपड़ों की दुकान खोलूँगा । एक-दो सालों में लाखों कमाऊँगा ।''

''उन लाखों अशर्फ़ियों को सुरक्षित रखने के लिए क्या फिर से बड़ी संदूक भी खरीदेंगे?'' भूदेवी ने पूछा ।

''नहीं, बिल्कुल नहीं । अब ऐसी संदूकों का ज़माना गुजर गया । जो है, उसी में आराम से रहेंगे ।'' भूषण ने तृप्ति-भरे शब्दों में कहा ।

भूषण ने जो कहा, कर दिखाया । उसने तरह-तरह के व्यापार किये और खूब कमाया । दूसरे ही साल वह भूपालपुर के धनिकों में से एक धनिक गिना जाने लगा । अब वह जितना कमाता सब अपनी पत्नी को देता । इस प्रकार पति-पत्नी सुखपूर्वक रहते हुए परोपकार के कार्यों में भी रुचि लेने लगे ।

एक महान सभ्यता की झाँकियाँ
युग-युग में सत्य के लिए इसकी गौरवमयी खोज

११. सावित्री की साहसपूर्ण गाथा

रविवार का दिन था । इसलिए देवनाथ की इच्छा थी कि परिवार के सभी सदस्यों के साथ पर्वतीय प्रदेश में जाएँ और मन बहलाएँ । वह प्रातःकाल आठ बजे तक तैयार हो गये संदीप के मित्रों से बराबर फोन आते रहे । वे पूछने लगे "दादाजी, सावित्री की कथा सुनने हम कब वहाँ आयें?" अपनी संस्कृति के बारे में जानने की उनकी उत्कंठा को देखते हुए देवनाथ को अपार आनंद हुआ । उन्होंने ठान लिया कि यात्रा अगले हफ़्ते तक टाल दी जाए । पुत्र-बधू ने सहर्ष उनके प्रस्ताव को स्वीकार किया ।

शाम के तीन बजे तक सब बच्चे आ गये और संदीप के घर के सामने के तमाल वृक्ष के बैठ गये । देवनाथ आकर कुर्सी में बैठ गये और कहने लगे "हमारी कथाओं में से एक प्रमुख कथा है, सावित्री की कथा । आज मैं आपको वह कथा सुनाऊँगा । सावित्री मद्र देश के राजा अश्वपति की पुत्री थी । क्या तुम लोग जानते हो कि मद्रदेश किस प्राँत में है?"

"आजकल चेन्नै कहा जानेवाला मद्रास है क्या दादाजी?" किशोर की बहन ने पूछा ।

"नहीं बिटिया, आज का अफगानिस्तान ही उस समय का मद्रदेश था। हमारे पुराणकाल के गांधार देश को ही आज कांधार कहते हैं ।" देवनाथ ने बताया ।

"ऐसी बात है । इसका यह मतलब हुआ कि वे सभी प्राँत भारत के भाग ही हैं ।" किशोर ने पूछा।

"तुमने बड़ा ही मुख्य प्रश्न पूछा । इसे अगर हमें विशद रूप से समझना हो तो हमें प्राचीन राजनैतिक व भौगोलिक स्वरूप के बारे में जानना होगा । भारत उपखंड को जंबू द्वीप कहा करते थे । जंबू द्वीप में अनेकों राज्य हुआ करते थे । एक विशिष्ट प्रकार के सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक बंधन ने इन सबको मिलाकर सुरक्षित रखा । उस समय की प्रजा मानती थी कि ये सारे राज्य एक हैं, अविभाज्य हैं । इसी कारण कौरवों और पांडवों के बीच जो महायुद्ध छिड़ा, उसमें किसी ने पांडवों का पक्ष लिया तो किसी ने

गाथा

कौरवों का पक्ष और यों उपखंड के सभी राज्यों ने इस युद्ध में भाग लिया । पेशावर, काबुल, बामियन बौद्ध विद्या के केंद्र हुआ करते थे । बामियन में बुद्ध की बड़ी-बड़ी मूर्तियाँ प्रतिस्थापित की गयी थीं । चेंधिजखान जैसे दुराक्रमणकारियों ने इनमें से बहुत सी मूर्तियों को तहस-नहस कर दिया । फिर भी ये सारी बातें इतिहास से ही संबंधित बाते हैं । अब आप लोग चाहते हैं कि मैं सावित्री की कथा सुनाऊँ। पांडवों के वनवास काल में मार्कंडेय मुनि ने पहले पहल यह कथा पांडवों को सुनायी ।'' फिर वे सावित्री की कथा यों सुनाने लगे ।

सावित्री मद्र देशाधिपति अश्वपति की इकलौती पुत्री थी । देवी सावित्री के वरदान से जन्मी सावित्री अद्भुत सुंदरी थी ।

वह सुगुणों की खान थी । उसका मुख दिव्य ज्योति से भरा रहता था ।

विवाह के योग्य हो जाने पर उसके पिता योग्य वर की खोज में लग गये । जो भी राजकुमार उसे देखने आये, उनमें से कोई भी उसके मुख पर व्याप्त तेजस्विता को देख नहीं पाये, क्योंकि उनमें इतनी क्षमता नहीं थी । अतः उसके पिता ने चाहा कि वह अपने लिए वर स्वयं चुन ले ।

विवेकपूर्ण मंत्रियों को साथ लेकर सावित्री एक सुँदर रथ में आसीन हो विविध राज्यों में गयी । अंत में बह साल्वराज्य की सरहद पर पहुँची, जो आजकल राजपुताना कहा जाता है । वहाँ उसने साल्वराजा द्युमत्सेन के पुत्र सत्यवान को देखा । द्युमत्सेन के अकस्मात् अंधा हो जाने से शत्रुओं ने फ़ायदा उठाकर उनके राज्य को अपने अधीन कर लिया । इस कारण वह अब मुनियों के बीच जंगल में रह रहे थे । सत्यवान अपने माता-पिता के साथ ही रहकर उनकी सेवा में लगे हुए थे ।

सावित्री ने सत्यवान से ही विवाह रचाने का निश्चय किया । अपने माता-पिता को यह शुभ समाचार सुनाने के लिए वह मद्रपुरी लौटी । राजभवन में नारद से उसकी भेंट हुई । विवरण जानने के बाद नारद ने कहा कि सत्यवान एक और वर्ष के अंदर मर जानेवाला है, और उसकी यह मृत्यु अटल है । विषय जानकर सावित्री और उसके माता-पिता चिंताग्रस्त हो गये ।

अश्वपति ने पुत्री को समझाने का प्रयत्न किया कि सत्यवान से विवाह रचाने का विचार वह छोड़ दे। किन्तु वह टस से मस न हुई । उसने हठ किया कि किसी भी स्थिति में वह सत्यवान से ही विवाह करेगी । उसने अपने माँ-बाप से स्पष्ट कह भी दिया कि सत्यवान के सिवा किसी और से विवाह करेगी ही नहीं ।

अश्वपति जानते थे कि उनकी पुत्री एक असाधारण स्त्री है और उसे भली-भांति मालूम है कि भाग्य का सामना कैसे किया जाए । इसलिए उसने उसकी इच्छा के ही अनुसार उसका विवाह सत्यवान से रचाया ।

सावित्री अपने पति के साथ अरण्य में बने कुटीर में ही रहने लगी । उसके सास और ससुर उसके आगमन पर अत्यंत प्रसन्न हुए । वह बड़ी ही श्रद्धा और लगन के साथ सास-ससुर की सेवा करती रही। बड़ों के साथ उसका व्यवहार नम्रतापूर्ण होता था, इसलिए सभी सावित्री का आदर करने लगे । उनकी दृष्टि में वह एक अपूर्व व आदर्श स्त्री थी ।

किन्तु सावित्री अशांत रहा करती थी । चिंता उसे खाये जा रही थी । पति के जीवन-काल को लेकर वह मन ही मन दुखी रहती थी । उसके लिए उसका पति सत्यवान प्राण-समान है । उसके बिना उसका जीवन शून्य है । वह इस कठोर सत्य को भूल नहीं पायी कि मृत्यु किसी भी क्षण उसे निगल जायेगी। उसने मन ही मन निश्चय कर लिया कि ''जो भी हो, उस दिन का सामना करूँगी और अपने पति को बचा लूँगी ।''

वह भक्तिपूर्वक ध्यान में मग्न होकर अपनी आत्मशक्ति को बढ़ाती जाने लगी । आख़िर नारद का कहा वह मृत्यु-दिवस आ ही गया ।

उस दिन प्रातःकाल ही समिधाओं के लिए अरण्य में जा रहे अपने पति सत्यवान के साथ-साथ वह भी गयी । मध्याह्न होते-होते सत्यवान को लगा कि उसका सिर चकरा रहा है । सावित्री की जांघ पर सिर रखकर वह लेट गया । सावित्री को मालूम था कि क्या होनेवाला है । मन ही मन वह भगवान का स्मरण करती हुई निश्चल होकर वैसे ही बैठी रह गयी।

थोड़ी देर बाद उसने देखा कि एक दिव्य स्वरूप सामने है और उसकी आँखें लाल-लाल हैं । उसने जान लिया कि ये कोई और नहीं, स्वयं यमराज हैं। सत्यवान की आत्मा को लेकर यमराज आगे बढ़े ।

सावित्री ने यमराज का पीछा किया । उसके अद्‌भुत शक्ति-सामर्थ्यों को देखकर यमराज आश्चर्य में डूब गये । उस पतिव्रता स्त्री को देखते हुए उन्हें आनंद भी हुआ । उन्होंने उससे पूछा ''देवी, तुम मेरे पीछे-पीछे क्यों चली आ रही हो? अपने पति के प्राण के अलावा तुम्हें कोई वर मांगना हो तो मांगो और लौट जाओ ।'' सावित्री ने अंधे ससुर को दृष्टि प्रदान करने तथा उनके छीने गये राज्य को वापस दिलाने की प्रार्थना की ।'' यमराज ने उसकी प्रार्थना स्वीकार कर ली ।

फिर भी सावित्री लौटने का नाम नहीं ले रही थी। प्रार्थना करती हुई वह यमराज के पीछे-पीछे जाने लगी । यमराज का मन दया से पसीज उठा और उसे दो और वर मांगने की अनुमति दी । तब उसने अपनी

इच्छा प्रकट करते हुए कहा कि मैं जीवन पर्यंत सत्यवान की सह धर्मचारिणी बनकर रहूँ और उसकी संतान की माँ बनने का भाग्य मुझे प्राप्त हो । यमराज ने 'हाँ' कह दिया ।

सत्यवान में पुनः प्राण आ जाए, तभी ये दोनों वर फलीभूत हो सकते हैं । सावित्री से मांगे गये इन वरों को स्वीकार करने के कारण यमराज को प्राण-दान सत्यवान को देना ही पड़ा । सावित्री की समयोचित बुद्धि के कारण यह संभव हो पाया ।

सत्यवान धीरे-धीरे उठा, मानों अभी-अभी नींद से जाग रहा हो । दोनों मिलकर कुटीर में आये। द्युमत्सेन पुत्र और पुत्र बधू को देखकर अति प्रसन्न हुआ और उन्हें आशीर्वाद दिया । तब तक उनकी दृष्टि वापस आ चुकी थी । उसके राज्य सिंहासन पर तब तक आसीन दुष्ट राजा को प्रजा ने मार डाला और प्रजा मंत्रिगण उनका स्वागत करने वहाँ आये ।

महाभारत में कथित सावित्री-सत्यवान की यह कथा संक्षिप्त है । फिर भी यह कथा महान है । क्या तुम लोग जानते हो कि यह कथा इतनी महान क्यों है? इस कथा में कुछ प्रगाढ़ सत्य छिप हुए हैं । अपनी आत्मशक्ति के बल पर सावित्री ने अपने पति का भाग्य बदला । उसका पति सचमुच ही सत्यव्रती था । पति-पत्नी दोनों का स्वभाव पवित्र है । उनके चरित्र सर्वश्रेष्ठ हैं । श्री अरविंद अगर सावित्री महाकाव्य की रचना न करते तो इस कथा के गूढ़ार्थों से, सत्यों से हम परिचित नहीं हो पाते । एक पुरातन गाथा को वे एक महोन्नत प्रतीक स्तर तक ले गये ।

एक व्यक्ति के निर्मल पवित्र प्रेम ने दूसरे व्यक्ति की ललाट रेखाओं को ही परिवर्तित कर दिया । है न? अब इसमें कोई संदेह नहीं रह जाता कि भविष्य में विकसित होनेवाला दिव्य प्रेम मानवजाति के रामन को और गम्य को भी बदलकर सन्मार्ग पर उसे ले जायेगा । मनुष्य को चाहिये कि वह सत्य के मार्ग पर चले और उसके उन्नत शिखरों पर पहुँचकर उस स्तर तक पहुँचने की योग्यता प्राप्त करे । यह विषय हमें कभी भी भुलाना नहीं चाहिये।"

"दादाजी, सावित्री पढ़कर आप हमें सुनाएँगे तो अच्छा होगा ।" एक लड़की ने बिनती की ।

"बड़े हो जाने के बाद आप लोग स्वयं उस ग्रंथ को पढ़िये, उसका मनन कीजिये" अब भी उस ग्रंथ को पढ़ने का काम आप लोग शुरू कर सकते हैं । शायद आप उसका अर्थ समझ न पायें, परंतु वह आप पर अद्भुत प्रभाव डालेगा । बड़ा ही अनोखा अनुभव साबित होगा । आपको ज्ञात होगा कि श्रेष्ठ कविता कैसी होती है ।" कहते हुए देवनाथ उठकर खड़े हो गये ।

इस माह जिनकी जयन्ती है

बाबू राजेन्द्र प्रसाद

३ दिसम्बर १८८४ में बिहार में जन्मा बच्चा आगे चलकर बाबू राजेन्द्र प्रसाद के नाम से प्रसिद्ध हुआ । यही राजेन्द्रबाबू स्वतंत्र भारत के प्रथम राष्ट्रपति के पद पर आसीन हुए ।

राजेन्द्र बाबू की उच्च शिक्षा कलकत्ता विश्वविद्यालय में हुई । बाद में वे पटना आ गए । जहाँ उन्होंने कानूनी पढ़ाई पूरी की और शीघ्र ही वे उच्च न्यायालय के जाने माने अधिवक्ता बन गए । लेकिन उनका मस्तिष्क हमेशा मातृभूमि की रक्षा के लिए उलझन में पड़ा रहा, जो उस समय अंग्रेजी शासकों के अधिकार में थी। बिहार के चम्पारण जिले में १९१७ में गाँधीजी द्वारा चलाए गए सत्याग्रह आन्दोलन के दौरान वे गाँधी जी के सम्पर्क में आये । शीघ्र ही उन्होंने अपने उज्ज्वल भविष्य को अलविदा कहकर असहयोग आन्दोलन में प्रवेश ले लिया ।

अपने कार्यों द्वारा शीघ्र ही वे जाने-माने नेता भी बन गए और १९२२ में उन्हें भारतीय राष्ट्रीय कॉंग्रेस का महासचिव बन दिया गया । उन्होंने अपनी योग्यता के बल पर काफी प्रसिद्धि पायी । इसमें कोई संदेह नहीं कि वे लगातार १९३४, ३९ तथा ४७ में कॉंग्रेस के अध्यक्ष चुने गए ।

जब १९४६ में स्वतंत्र भारत के संविधान के लिए एक समिति बनाई गई तो उन्हें इसका सभापति चुना गया । संविधान बनाने में उनका सहयोग अविस्मरणीय है ।

१९४७ में वे जवाहरलाल नेहरू द्वारा गठित मंत्रीमण्डल के मंत्री बने । जब १९५० में नया संविधान लागू हुआ तो देश में सामान्य चुनाव घोषित हुए । फलस्वरूप १९५२ में उन्हें राष्ट्रपति पद के लिए चुन लिया गया । राजेन्द्र बाबू इस गरिमामय पद पर लगातार १९६२ तक बने रहे ।

भारत के राष्ट्रपति बन जाने के बाद भी वे अपने स्वभावानुसार सामान्य भारतीय लोगों से मिलते रहे । वे अधिकतर किसी स्थान का दौरा रेल गाड़ी से किया करते और जगह-जगह रुककर एकत्रित लोगों को सम्बोधित करते थे ।

१९६२ में राष्ट्रपति पद से सेवा निवृत्त होते समय भारत सरकार ने उन्हें श्रेष्ठ सम्मान 'भारत रत्न' से सम्मानित किया । डॉ. राजेन्द्रप्रसाद का देहान्त २८ फरवरी १९६३ को पटना में हुआ । कवियित्री सरोजनी नायडू से जब राजेन्द्र बाबू के जीवन की झलकियाँ लिखने को कहा गया तो उन्होंने कहा "मैं यह कार्य तभी सम्पन्न कर पाऊँगी जब कि मेरे पास शहद के घड़े में डूबी सोने की कलम हो । क्योंकि सभी शब्द उनकी अच्छाइयाँ या उनकी अच्छाईयों का वर्णन करने के लिए पूरे नहीं पड़ते ।

चंदामामा प्रस्तुति
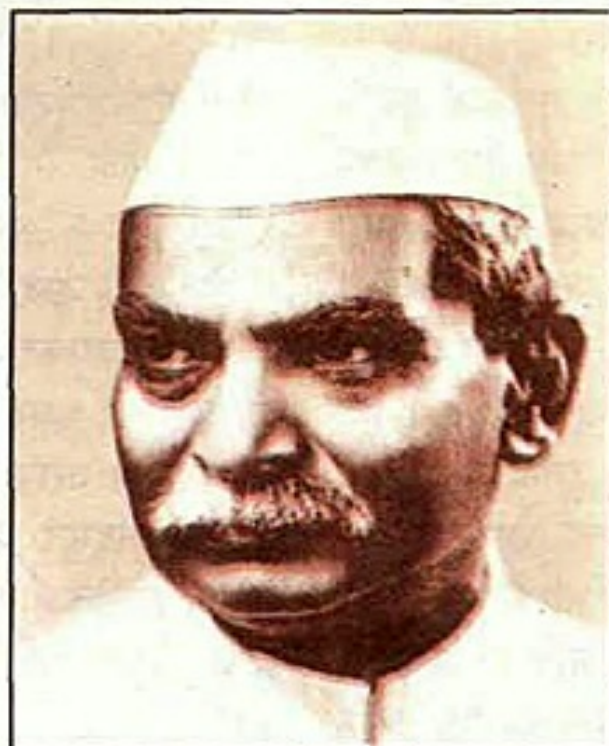
परोपकारी समीर

चित्र : फणि

पिशाच का नाटक

मंगापुर में मंगा नामक एक सूदखोर था । बहुत-सा धन कमाकर उसने अपने बेटे गोविंद को सौंपा और मर गया । गोविंद ने लोहे की पेटी खोली और उस धन-राशि को देखकर खुशी से फूला न समाया।

वह पिशाच का वेष धारण कर, सफेद कपड़े पहनता और अजीब आवाजें निकाला करता था । यों लोगों को डराने के उद्देश्य से वह यह कार्य करता था । गलती से कोई आ भी जाए तो उसे सचमुच ही पिशाच समझकर, भाग जाता था ।

सुबह से पहले गोविन्द घर पहुँच जाता ।
मैं सोचता हूँ कि किसी ने मुझे देखा नहीं ।

भाई ... मैंने... देखा..एक भूत
हाँ, बरगद के पेड़ के पास
तुम पहले आदमी नहीं हो जिसने मुझे बताया! अब क्या किया जाए ?

बरगद के पेड़ के पास?
क्या आपने पिशाच के बारे में सुना?
किसी ने कहा पिशाच मेरे पिता के जैसा है ।

भूत! भूत! बचाओ! मुझे बचाओ !
गाँव भर में पिशाच की अफ़वाह फैल गयी। किसी को पेड़ के नीचे जाने का साहस नहीं होता।

लोग रात में बाहर जाने से डरने लगे ।

यहाँ पर कोई भूत नहीं है । जल्दी उठिये और खाने के लिए कुछ ले आइये !
क्या भूत दूर चला गया ?

मँगैय्या का भूत सभी को मार रहा है ।
अगर किसी ने पिशाच देखा भी तो वह बीमार पड़ जाता है।

खेतों में और घरों में चोरियाँ दिन-ब-दिन बढ़ती गयीं । लुटेरे निधड़क लोगों को लूट रहे थे ।
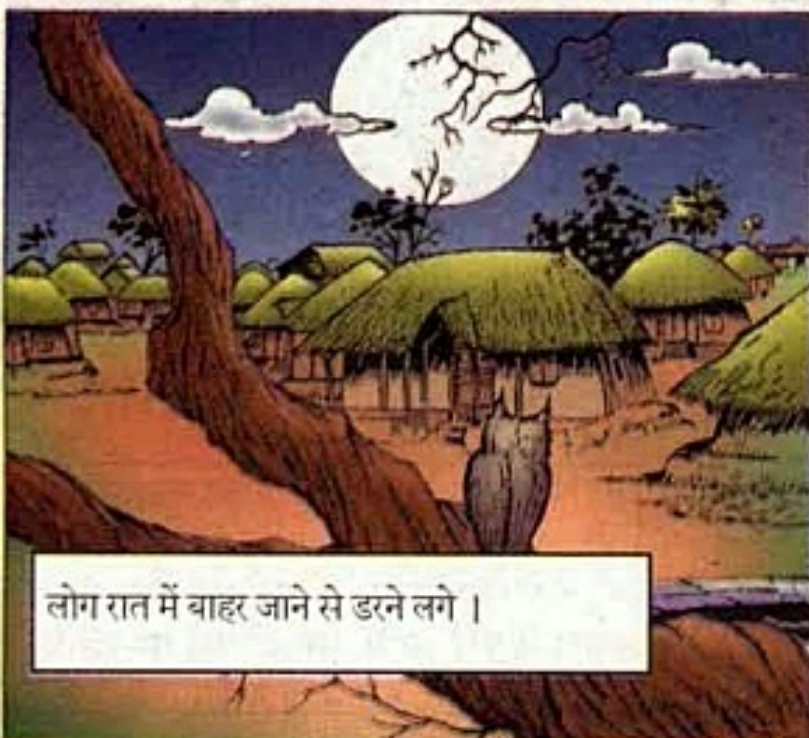
मरनेवालों की संख्या बढ़ती गयी । ग्रामीणों का जीवन अस्तव्यस्त हो गया ।

शीघ्र ही कुछ करना चाहिए !
ये सब कैसे समाप्त होगा ?

इन सबका लाभ उठाकर गोविन्द ने राशन ऊँचे दामों पर बेचना आरम्भ किया ।
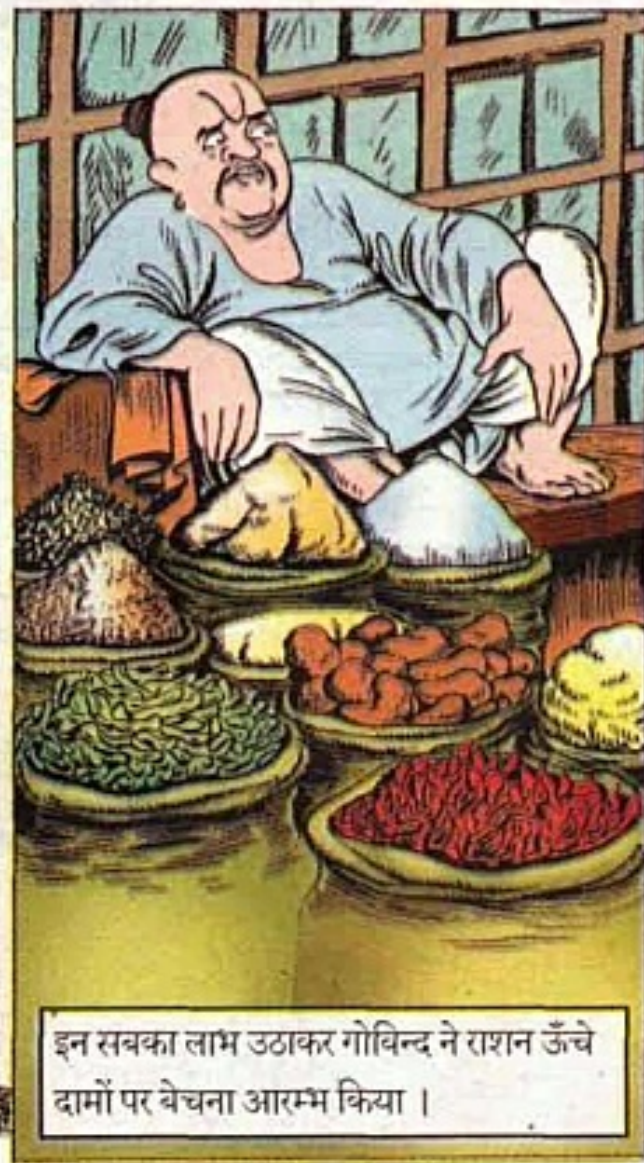
लगातार गिविन्द अपने गाडे हुए धन पर रात को नज़र रखने लगा ।

समीर और शेरू घूँमते-घूँमते मंगलपुरा पहुँचे । शीघ्र ही समीर का पता चल गया कि इस गाँव में कोई गड़बड़ चल रही है ।

क्यों? क्या बात है?

भाई, यह जगह सुरक्षित नहीं है। विशेषकर अजनबियों के लिए !

क्या कहें भाई? हम लोग एक पिशाच से भयभीत हैं!

एक दिन के बाद समीर ने उस आकार का गाँव में पीछा किया ।
यह किसका घर है?
यहाँ राशनवाला गोविंद सेठ रहता है ।
और नजर रखने लगा कि यह कहाँ जाता है । बाद में समीर एक पडोस के घर में गया ।
जब मंगय्या सेठ जिन्दा था तो लोगों को परेशान करता था...
.... उधार लिये गये पैसे पर अधिक ब्याज लगाकर । अब उसका भूत लोगों को परेशान कर रहा है ।
अच्छा तो गोविन्द सेठ अपने परिवार और घर के देख-भाल के स्थान पर अपना रात का समय बरगद के पेड़ के नीचे बिताता है । इसे भूत का नाटक करने की क्या आवश्यकता है? इसका क्या उद्देश्य हो सकता है? मुझे पता लगाना होगा ।
समीर ने सन्ध्या होने की प्रतीक्षा की । उसने अपना वेष बदला और गोविन्द के घर गया ।
क्रमशः

आँखें खुल गयी

पूर्णवर्मा दीप्तगिरि का राजा था । वह बड़ा ही अहंकारी था । जो उसे अच्छा लगता, वही करता । दूसरों की बातों को वह अनसुनी कर देता था। उसमें एक और दुर्गुण भी था । वह अपने देश के विशिष्ट व्यक्तियों और मेधावियों की प्रशंसा करता ही नहीं था। उनका मज़ाक उड़ाता था । उनकी बुद्धिमानी पर उसे विश्वास ही नहीं था । किन्तु अन्य देशों से आये कवि, पंडित और गायकों की प्रशंसा करते हुए थकता नहीं था । उनकी वाहवाही करते हुए उसे आनंद मिलता था ।

इसी कारण दीप्तगिरि के समर्थ कवि गायक, कलाकार, शिल्पी उस देश में रहने के इच्छुक नहीं थे । उन्हें निराशा ने घेर लिया था । कोई और दूसरा चारा न होने के कारण वे अपने देश को छोड़कर दूसरे देशों में जाने लगे । ऐसा करते हुए उन्हें दुख होता था, पर वे कर भी क्या सकते थे ।

एक दिन रविचंद्र नामक एक व्यक्ति पूर्णवर्मा से मिलने आया । वह बुनाई में प्रवीण था । उसने अपनी दक्षता का जिक्र करते हुए कहा ''महाराज, इस कला में मेरी बराबरी का कोई है ही नहीं ।''

''तुम किस राज्य के हो?'' पूर्णवर्मा ने पूछा।

''मैं कलुवगिरि राज्य का नागरिक हूँ'' रविचंद्र ने कहा ।

राजा ने उत्साह-भरे स्वर में पूछा ''इस कला में तुम्हारी क्या विशिष्टता है दिखाना तो सही ।''

रविचंद्र ने थैली खोली और उसमें से चाँदी की एक डिबिया में बंद एक पतले वस्त्र को बाहर निकाला। फिर कहा ''प्रभु, यह तीन

अमृत शाह

गज़ का लंबा और डेढ़ गज़ का चौड़ा वस्त्र है। यह एक रेशमी पीतांबर है । मैंने इतने बड़े वस्त्र को छोटी-सी डिबिया में बंद कर दिया । यह मेरी बुनाई की श्रेष्ठता का नमूना है । ऐसा श्रेष्ठ नमूना शायद ही कहीं और देखने को मिलेगा।''

पूर्णवर्मा ने कहा ''बुनाई में तुम्हारा यह कौशल अति प्रशंसनीय है । आज से तुम हमारे आस्थान में रहो। हर महीने तुम्हें हज़ार अशर्फ़ियाँ दी जायेंगीं और रहने के लिए घर का भी प्रबंध किया जायेगा । हमारे राजपरिवारों के लिए ऐसे महीन वस्त्रों को बुनते रहो ।''

राजा की उदारता पर प्रसन्न होते हुए रविचंद्र ने कहा ''बहुत धन्यवाद महाराज । आपकी उदारता अति श्लाघनीय है । मैं धन्य हो गया।''

इस घटना के एक महीने बाद राजा पूर्णवर्मा और मंत्री सचिवर्मा घाड़ों पर आसीन होकर बहुरुपिया बनकर देश में भ्रमण करने निकले । रातों में वे छोटे-छोटे गाँवों में ठहर जाते थे और दूसरे दिन सबेरे ही वहाँ से निकल जाते थे । एक हफ़्ते के बाद वे कलुबगिरि पहुँचे । उनके उस गाँव में पहुँचते -पहुँचते अंधेरा छा चुका था । इसलिए वे एक सराय में ठहर गये । खाना खा लेने के बाद वे गाँव में घूमने निकले ।

उन्होंने देखा कि वहाँ एक आदमी ज़ोर से चिल्ला रहा था ''बहुत ही उत्तम वस्त्र हैं । सस्ते भी हैं । आपको अच्छे लगे तभी खरीदियेगा ।'' लोग उसके चारों ओर खड़े
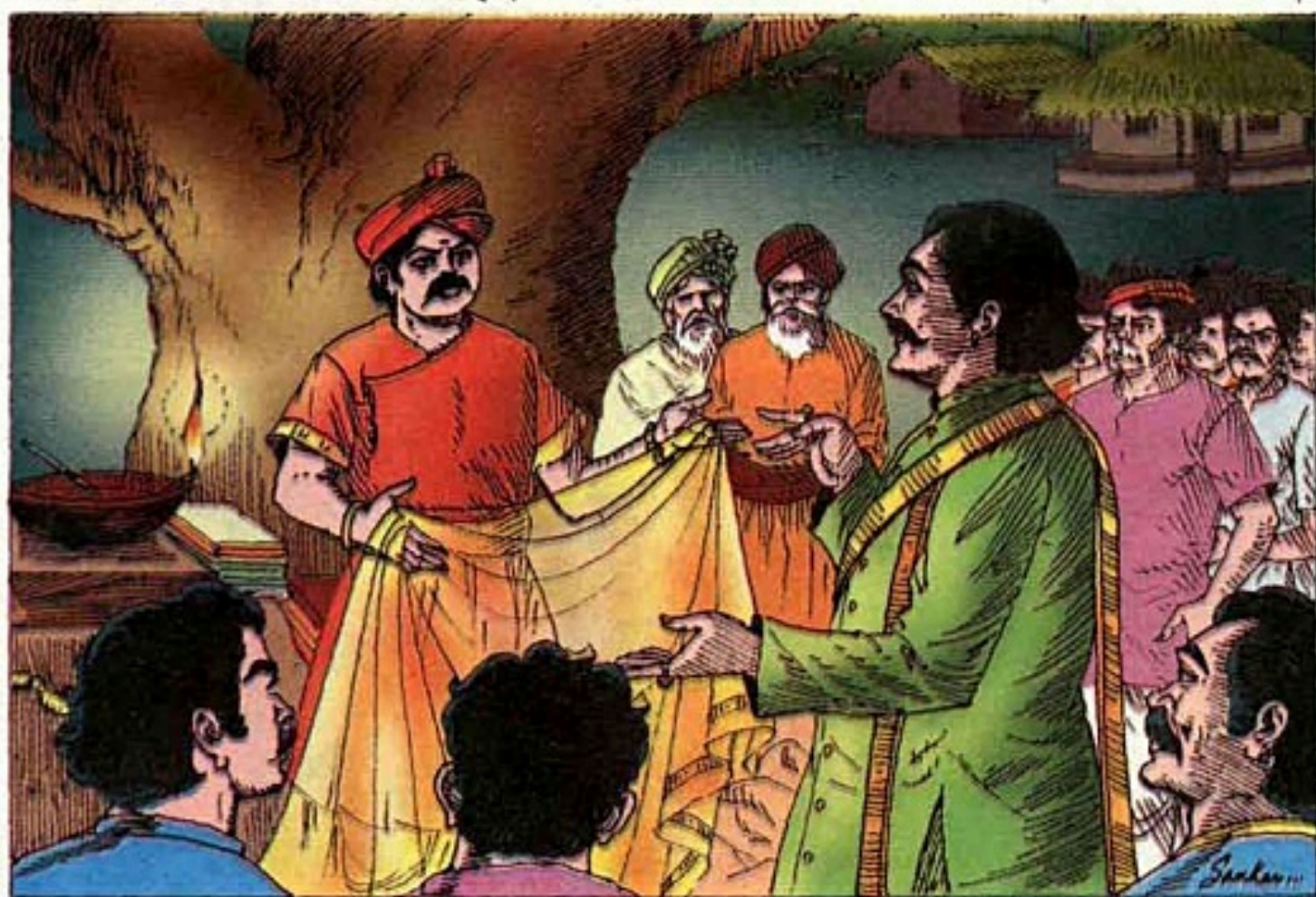
होकर वस्त्र खरीद रहे थे । राजा और मंत्री वस्त्रों को ध्यान से परख रहे थे । इतने में एक संपन्न व्यक्ति भीड़ में से होता हुआ आगे आया और कहने लगा "इससे और अच्छे व बढ़कर वस्त्र हों तो दिखाना ।"

"थोड़ा ठहरिए" कहते हुए उस व्यक्ति ने बगल में रखी गठरी खोली और दंत से बनी एक डिबिया खोली" देखिये साहब, इसमें चार गज का लंबा और दो गज़ के चौड़ा दो रेशमी पीतांबर हैं ।" उन्हें दिखाते हुए उसने कहा "इनकी क़ीमत है सिर्फ़ बीस अशर्फ़ियाँ ।"

संपन्न व्यक्ति ने उन वस्त्रों को पसंद किया । उनकी कीमत चुकाकर जाते हुए उसने पूछा "क्या तुम इसी देश के हो?"

"नहीं साहब, मैं दीप्तिगिरि राज्य का हूँ।" जुलाहे ने कहा । इस बात पर आश्चर्य प्रकट करते हुए संपन्न व्यक्ति ने कहा "इतने प्रवीण हो, फिर भी अपना राज्य छोड़कर इतनी दूर क्यों चले आये?"

उसने दीन स्वर में बताया "हमारे राजा का स्वभाव बड़ा ही विचित्र है । अपने देश के प्रमुख्य व्यक्तियों और उनकी कलाओं को परखने की शक्ति उनमें नहीं है । उनका समझना है कि उनके देश के कलाकारों से अन्य देशों के कलाकार उत्तम हैं, श्रेष्ठ हैं । मैंने उनसे मिलने की कोशिश की, पर कामयाब नहीं हो पाया । स्वदेश के बड़े से बड़े मेधावी को भी उनसे मिलने की अनुमति नहीं दी जाती । अपने को अन्य देशस्थ कहकर कोई उनसे मिल भी पाये, तो सत्य प्रकट हो जाने पर वे उसे क़ैद करते हैं । कोई और चारा नहीं, इसीलिए अन्य देशों में आकर अपनी चीज़ें बेचनी पडती हैं ।"

उस व्यापारी की सत्य भरी बातें सुनते ही राजा का चेहरा विवर्ण हो गया । शरम के मारे सिर झुकाकर मंत्री के साथ सराय लौट आया। उस जुलाही की बातों ने उसकी आँखें खोल दीं ।

सबेरे ही वह और मंत्री स्वदेश लौटे । दशहरा त्यौहार के अवसर पर उन्होंने अपने देश के कवियों, कलाकारों और शिल्पकारों का सम्मान वैभवपूर्वक किया ।

निडर

एक घने जंगल में जगदांबा नामक एक जादूगरनी थी, जो बड़ी ही क्रूर थी। जंगल में से गुजरते हुए लोगों को डराती और उन्हें मारकर बड़ी ही खुश होती थी। वह एक गुफ़ा में रहती थी जो मरे लोगों के अस्थिपंजरों से भर गयी थी। उनके बीचों बीच सोने पर ही, उसे रातों में नींद आती।

उस जंगल के पास के गाँव का रमानाथ नामक युवक पिछले साल शिकार करने जंगल गया था, जादूगरनी ने उसे मार डाला, इसलिए गाँव के लोगों ने जंगल की तरफ़ जाना भी छोड़ दिया।

वीर रमानाथ का छोटा भाई था। लोग कहा करते थे कि ऐसे निडर युवक को आज तक हमने देखा ही नहीं। एक दिन उसने ठान लिया कि जादूगरनी की जान लेकर ही रहूँगा। किसी से बताये बिना वह निर्भीक होकर घने जंगल में घुस गया।

वीर जब जगदांबा के निवास-स्थल पर पहुँचा तब उसने देखा कि वह बरगद के विशाल बृक्ष के नीचे बैठकर सोच में पड़ी है। इधर कुछ दिनों से कोई मानव उधर से गुजर नहीं रहा था, इसलिए उसी के पास आते हुए वीर को देखकर वह बेहद खुश हुई, उसकी आँखें चमक उठीं।

वीर जादूगरनी के पास आकर बोला ''दादी, मज़े में हो?'' अपनी आँखों से आग बरसाती हुई वह बोली ''मज़े में हूँ, इसीलिए तो यहाँ आराम से बैठी हूँ। अरे मेरे पोते, कहाँ जाना है?''

''क्या कहूँ ताई, मेरा नाम वीर है। सब कहते हैं कि मैं जानता ही नहीं कि डर क्या होता है। गुरु ने पाठशाला में सभी विद्याएँ सिखायीं पर यह नहीं सिखाया कि डर क्या होता है। इधर कुछ दिनों से मुझे डरानेवालों की खोज में हूँ। किन्तु कोई दिखाई ही नहीं पड़ा।'' वीर ने

सदानंद

निर्भीक होकर कहा ।

''ऐसी बात है पोते ! तब तो तुम सही जगह पर ही आये हो । जल्दी ही तुम्हें परलोक पहुँचने का रास्ता बताऊँगी'' बिकट अट्टहास करते हुए जगदांबा ने कहा ।

''मुझे डरानेवाले परलोक में भेजने का तुम्हारा इरादा है? ज़रूर भेजना । मैंने तुम्हारे बारे में बहुत कुछ सुन रखा था । लोग कहते हैं कि जादूगरनी जगदांबा का रूप भयंकर होता है। उसे देखते ही हाथ-पाँव कांपने लगते हैं । पर तुम तो बड़ी ही सुंदर लग रही हो । तुम्हारे ये बिखरे-बिखरे सफ़ेद बाल तुम्हारी यह चपटी नाक, आग बरसाती हुई तुम्हारी थे आँखें, वाह, तुम्हारी सुंदरता का कितना ही वर्णन करूँ, कम है ।'' बीर ने उसकी भरपूर प्रशंसा की ।

जादूगरनी उसकी बातों से खुश हो उठी और बोली ''पोते, सच बता रहे हो न? क्या सचमुच मैं इतनी सुंदर हूँ?''

''तुम्हें मेरी बात पर विश्वास न हो तो अपना रूप-रंग आइने में देख लो ।'' कहते हुए अपनी थैली में से आइना निकालकर बीर ने उसे दिया। आइने में अपने चेहरे को देखकर जादूगरनी को लगा कि वह बहुत ही सुंदर है । वह थोड़ा शरमा भी गयी ।

''पोते, तुमने जो कहा, बिल्कुल सच है । इतने लंबे अर्से के बाद तुम्हारे बताने पर ही यह सचाई मुझे मालूम हो पायी । चलो, स्वादिष्ट खाना खिलाती हूँ'' आनंद-भरे स्वर में हँसती हुई जगदांबा ने कहा ।

''खाना बाद खा लूँगा, पहले मुझे ड़राने की कोशिश करना । देख लेता हूँ, इसमें तुम कामयाब होती हो या नहीं ।'' बीर ने कहा ।

''अरे ओ नादान, मैं डराने लग गयी तो खड़े के खड़े मर जाओगे । तुमने मेरी सुँदरता की तारीफ़ की, इसीलिए तुम्हें मारने की इच्छा नहीं हो रही है'' नखरे दिखाती हुई जगदांबा ने कहा।

''मैं जान गया कि तुममें मुझे डराने की हिम्मत नहीं है । अब यहाँ रहने से क्या फ़ायदा है । अब मैं चला'' कहता हुआ बीर मुड़कर जाने लगा ।

''ऐसी बात है ! तो चलो मेरे साथ'' वह उसे अपनी गुफ़ा के अंदर ले गयी ।

अंदर जाने के बाद बीर ने वहाँ अस्थिपंजरों का ढेर देखा । ''तब तो इन अस्थिपंजरों में से मेरे भाई का भी अस्थिपंजर अवश्य होगा ।'' मन ही मन यह सोचते हुए उसने उसने आँखें बंद कर लीं ।

इतने में जादूगरनी किकियाती हुई बोली ''अरे मेरे पोते, इनमें से मैंने किसी की भी हत्या न ही विष देकर की, न ही चाकू से भोंककर । कहते हैं, अक़्लमंद को इशारा काफ़ी है । तुम अक़्लमंद हो तो समझ गये होगे कि मैं कितनी भयंकर जादूगरनी हूँ । मैं देख रही हूँ कि इन अस्थिपंजरों को देखते ही तुम्हारे चेहरे का रंग उड़ गया । अब समझ गये, मैं क्या हूँ?''

''इन सबों के दिल खरगोश के दिल होंगे । अव्वल दर्जे के कायर होंगे । मैं इनमें से नहीं हूँ। मेरा दिल शेर का दिल है ।'' वीर ने कहा ।

उसकी बातें सुनते ही वह आग बबूला हो उठी और कहा ''लगता है, मरने के लिए छटपटा रहे हो ।'' कहकर उसने अपने ही आप एक मंत्र पढा ।

दूसरे ही क्षण उसका सिर बाघ का सिर बन गया । बदन गिद्ध पक्षी बन गया और उसमें पंख उग आये । उसने वीर को अपने मज़बूत नाखूनों से पकड़ लिया और आकाश में उड़ने लगी । थोड़ी देर तक वह आकाश में वीर को लिये घूमती रही और उसी स्थल पर उतर आयी। एक और मंत्र पढ़कर यथावत् जगदांबा बन गयी।

वीर जैसा था, वैसा ही है । उसके चेहरे पर डर था ही नहीं । न ही वह अपनी प्राण-रक्षा के लिए गिड़गिड़ाया और न ही अपनी हार मानकर सिर झुकाकर खडा रह गया । जादूगरनी उसके साहस को देखकर चकित रह गयी और बोली ''अरे, तुम अब भी ज़िन्दा हो । सोचा, मर चुके होंगे ।''

मैं तुम्हारे इन करतबों से थोड़े ही मरनेवाला

हूँ। मुझे आकाश में घुमाया, इसके लिए धन्यवाद। बड़ा मज़ा आया'' वीर ने कहा ।

वीर की निडरता को देखकर वह आपे से बाहर हो गयी । चीखती-चिल्लाती हुई उसने एक और मंत्र पढ़ा । वीर ने उसका मज़ाक उड़ाते हुए कहा ''लगता है, तुम्हारे पास मंत्रों की बड़ी गठरी पड़ी है। तुमने इस बार भी मुझे डराकर इन अस्थिपंजरों में से एक नहीं बना दिया तो तुम्हें एक मंत्र सिखाना होगा । बोलो, शर्त मंजूर है?''

जादूगरनी ने उसकी शर्त मान ली । इस बार वह खुद अस्थिपंजर बन गयी । उसमें से कितने ही साँप फुफकारते हुए बाहर आने लगे । फिर भी वीर डरा नहीं । उसके माथे पर डर के कारण एक सिकुड़न भी दिखायी नहीं पड़ी । उसने ठठाकर हँसते हुए कहा ''हार गयी हो जगदांबा, तुम हार गयी हो । अब तुम्हें शर्त के मुताबिक मुझे एक मंत्र सिखाना होगा ।''

"तुम्हारा दिल, दिल नहीं, चट्टान है ।" कहकर वह निजी रूप में बदल गयी ।

थोड़ी देर तक सोचने के बाद जादूगरनी ने कहा "ठीक है, तुम्हें मंत्र सिखाऊँगी । यह साबित करूँगी कि जादूगरनी अपने बचन से नहीं टलती ।" फिर उसने बीर को एक मंत्र सिखाया ।

बीर ने कहा "इतना छोटा-सा मंत्र? बिच्छू के इस मंत्र से क्या फ़ायदा?" उसने नाराज़ होकर कहा "अरे ओ साहसी लड़के, मैं कोई पगली नहीं हूँ कि तुम्हें बड़ा असरदार मंत्र सिखाऊँ ।"

"जगदांबा, मेरी दादी कहा करती थी कि जादूगरनियाँ चाहे कोई भी रूप धारण कर लें, पर बिच्छू के रूप में बदल नहीं सकतीं । यह उनके बस की बात नहीं है । क्या तुम बिच्छू बन सकती हो?"

जादूगरनी को लगा कि बीर ने उसका अपमान किया, उसे एक चुनौती दी । वह तिलमिला उठी । बोली "तेरी यह हिम्मत ! मेरी ही शक्ति पर शंका कर रहा है, तूने आख़िर मुझे समझ क्या रखा है?" फिर वह तुरंत बिच्छू बन गयी और बीर को डंक मारा ।

जादूगरनी का सिखाया हुआ मंत्र बीर मन ही मन पढ़ने लगा । इसके कारण बिच्छू के डंक ने उसका कुछ नहीं बिगाड़ा । उसने बिच्छू को अपने पैरों तले रौंद डाला और वह छटपटाता हुआ मर गया ।

अपनी जीत पर बीर को बेहद खुशी हुई । उसने देखा कि अस्थिपंजर मानवों का रूप धारण करके झुंड के झुंड चले आ रहे हैं । उनमें से बीर का बड़ा भाई भी था ।

अपने बड़े भाई को देखते ही बीर दौड़ता हुआ गया और उसे गले लगाया । वे लोग अब भी डरे हुए थे । भय के मारे इधर उधर देखते हुए कहने लगे "जादूगरनी कहीं छिपी होगी । चलो, भागें ।"

बीर ने उन्हें मरा बिच्छू दिखाया और कहा कि यही वह जादूगरनी है ।

बीर के साहस की प्रशंसा करते हुए सबने उसे अपने कंधों पर उठा लिया और यह कहते हुए गाँव की ओर बढ़े "बीर, जिसे डर भी छूने से डरता है ।"

५९. युद्ध में पांडवों की विजय

महाभारत

दस दिन युद्ध करके युद्ध क्षेत्र में भीष्म पितामह धराशायी हो गये । वे शिखण्डी के साथ युद्ध नहीं करते थे । इसलिए अर्जुन ने शिखण्डी को आगे रखकर पीछे से बाणों की वर्षा करते हुए भीष्म को गिरा दिया ।

भीष्म पितामह गिर तो गये, मगर तुरंत मारे नहीं । उनके शरीर भर में बाण चुभे थे । इसलिए जब वे गिरे तब उनका शरीर ज़मीन को छू नहीं सका । उस हालत में उन्हें प्यास लगी । तब अर्जुन ने बाण का प्रहार करके पातालगंगा को ऊपर ला दिया । उत्तरायण के आगमन तक भीष्म पितामह शरशैय्या पर अपनी इच्छा से जीवित पड़े रहे ।

भीष्म के उपरांत द्रोणाचार्य ने कौरव सेनाओं का सर्व सेनापतित्व ग्रहण किया और उन्होंने पांच दिन तक युद्ध किया । उन्होंने पद्मव्यूह की रचना की, उसमें प्रवेश करके अर्जुन का पुत्र अभिमन्यु शत्रु योद्धाओं के हाथों में मर गया । उस वक्त अर्जुन दूर पर किसी दूसरे युद्धक्षेत्र में लड़ रहा था । अभिमन्यु के पीछे शेष पांडव पद्मव्यूह में घुसने को हुए, किंतु सैंधव (जयद्रध) ने उन्हें रोका । इस कारण अभिमन्यु की कोई सहायता नहीं कर पाया ।

यह समाचार सुनने पर अर्जुन ने प्रतिज्ञा की कि दूसरे दिन वह जयद्रध का वध करेगा। अर्जुन ने दूसरे दिन जयद्रध का वध किया भी। इसके बाद द्रोण और धृष्टद्युम्न के बीच

घोर युद्ध चल रहा था, तब युधिष्ठिर के मुँह से यह झूठा समाचार सुनकर कि अश्वत्थामा की मृत्यु हो गई है, द्रोण ने अस्त्र सन्यास किया, तब धृष्टद्युम्न ने उनका वध कर दिया ।

द्रोण की मृत्यु के उपरांत कर्ण ने कौरव सेनाओं का सेनापतित्व ग्रहण किया । कर्ण ने दुर्योधन से कहा कि वह शल्य को उसका सारथी बनाये । शल्य ने कर्ण का सारथी बनना स्वीकार किया । कर्ण ने दो दिन तक युद्ध किया । इन दोनों दिन शल्य कर्ण का अपमान करते हुए उसे हतोत्साहित करता रहा । दूसरे दिन कर्ण अर्जुन के साथ युद्ध कर रहा था तब उसके रथ का पहिया कीचड़ में धंस गया । कर्ण उसे ऊपर उठा रहा था, तभी अर्जुन ने उसे मार डाला ।

कर्ण के उपरांत शल्य कौरव सेना का सेनापति बना । वह उसी दिन युधिष्ठिर के साथ युद्ध करते हुए मारा गया ।

अट्ठारवें दिन युद्ध समाप्त हो गया । उस युद्ध में अट्ठारह अक्षौहिणियों की सेना मर गयी। दुर्योधन को छोड़ उसके सभी भाई युद्ध में मारे गये । दुश्शासन का भीम ने बुरी तरह से वध किया और सबके देखते उसका खून पी गया ।

इस युद्ध में दोनों दलों के अनेक हज़ार योद्धा मारे गए। पांडवों के पक्ष में पांडव, उप पांडव, युयुत्स, सात्यकी, धृष्टद्युम्न और शिखण्डी बच रहे ।

युयुत्स धृतराष्ट्र के द्वारा पैदा हुआ था । इसलिए युद्ध के समाप्त होते ही वह हस्तिनापुर चला गया ।

कौरवों के पक्ष में अश्वत्थामा, कृपाचार्य, कृतवर्मा और दुर्योधन जीवित रहें । युद्ध के अंतिम समय कृपाचार्य, अश्वत्थामा और कृतवर्मा ने दुर्योधन की खोज की, पर वह कहीं दिखाई न दिया। वह अपने कंधे पर गदा लिये एक बड़े तालाब के पास पहुँचा । वह यह नहीं जानता था कि कृतवर्मा, कृपाचार्य और अश्वत्थामा अभी जीवित हैं ।

तालाब के पास बैठे हुए दुर्योधन के पास संजय आ पहुँचा । दुर्योधन अपनी पराजय तथा अपने पक्ष के सभी योद्धाओं की मृत्यु पर दुख में डूबा हुआ था । उस वक्त संजय को देख उसने कहा - "हमारे पक्ष के लोगों में तुम्हें छोड़ क्या और कोई नहीं बचा है? मेरे पिताजी से कहो कि मैं इस तालाब में छिपा हुआ हूँ ।" यों कहते उसने तालाब में प्रवेश

किया ।

संजय दुर्योधन के यहाँ से लौट रहा था, तब रास्ते में कृतवर्मा, कृपाचार्य और अश्वत्थामा ने उसे देखा और पूछा - "संजय, दुर्योधन कहाँ है?"

संजय ने उन्हें वह तालाब दिखाकर बताया कि दुर्योधन जलस्तंभन करके उस तालाब में छिपा हुआ है ।

अश्वत्थामा ज़ोर से रो पड़ा और बोला - "ओह, सम्भवतः उन्हें नहीं मालूम कि हम लोग जीवित हैं । क्या हम चारों मिलकर पांडवों को पराजित नहीं कर सकते थे?" इसके बाद वे तीनों पांडवों के साथ युद्ध करने के लिए चल पड़े । मगर उनके युद्धक्षेत्र में पहुँचते-पहुँचते अंधेरा फैल गया । कौरवों के शिविरों से संबंधित नारियों को सेवक हस्तिनापुर ले जा रहे थे ।

युद्ध के समाप्त होते ही पांडव कृष्ण के साथ दुर्योधन की खोज़ करने लगे । दुर्योधन का भी बध करने का उनका संकल्प था । आखिर उन्हें मालूम हुआ कि दुर्योधन तालाब में छिपा हुआ है, वे सब वहाँ पर आ पहुँचे ।

युधिष्ठिर ने दुर्योधन से कहा - "तुम्हारे वंश के विनाश के बाद तुम अपने प्राण बचाने के लिए क्या तालाब में छिपे बैठे हो? यह तो अन्याय है, तुम बाहर आकर हमारे साथ युद्ध करो । तुम जैसे अहंकारी के लिए यह कायरता ठीक नहीं है । हमें पराजित किये बिना तुम्हारा राज्याधिकार नहीं ठहरेगा । आओ, हमें हराओ तो!"

"मुझे राज्य की आवश्यकता नहीं, तुम्हीं उस पर शासन करो ।" दुर्योधन ने जवाब दिया ।

"तुम से मैं राज्य का दान नहीं चाहता । इसके अतिरिक्त दान करने के लिए अब तुम्हारे हाथ में राज्य ही कहाँ रहा ? हमें हराकर राज्य ले लो । नहीं तो हमारे हाथों हार जाओ ।" युधिष्ठिर ने कहा ।

पांडवों के तीखे बचनों से दुर्योधन क्रोधित हो तालाब में से बाहर आया । उस समय दुर्योधन ने भीम के साथ गदायुद्ध किया, उस युद्ध में भीम ने दुर्योधन की जांधें तोड़ दीं ।

जांघें टूटने के कारण दुर्योधन नीचे गिरा हुआ था, पर मरा नहीं था । तब कृपाचार्य, अश्वत्थामा तथा कृतवर्मा उसके पास आये और उसकी इस दुस्थिति पर शोक प्रकट किया। अश्वत्थामा ने दुर्योधन के समक्ष

प्रतिज्ञा की कि वह उसी रात को पांडव तथा बचे हुए सभी पांचालों का वध करेगा । इस बात पर प्रसन्न हो दुर्योधन ने अश्वत्थामा को अपना सर्व सेनापति नियुक्त किया ।

इसके बाद वे तीनों योद्धा वहाँ से निकल पड़े और पांडवों के शिविरों के निकट जाकर एक जगह छिप गये । वहाँ पर एक जंगल था। उसमें एक हज़ार शाखाओं वाला बरगद का वृक्ष था । उसके नीचे उन तीनों ने विश्राम किया । अश्वत्थामा ने अपने शत्रुओं का अन्यायपूर्वक सोते समय वध करने का निश्चय कर लिया । क्योंकि पांडवों ने युद्ध में इस तरह के अनेक अन्याय किये थे । उसने कृपाचार्य और कृतवर्मा को भी इसके लिए मनवाया । तब उन्हें साथ ले पांडवों के शिविर के पास आ पहुँचा । कृपाचार्य और कृतवर्मा को उसने शिविर के द्वार पर खड़ा किया । वह तलवार हाथ में लेकर भीतर पहुँचा । पहले उसने धृष्टद्युम्न को जगाकर उसे मार डाला । यह आहट पाकर कुछ लोग जाग पड़े और उस पर टूट पड़े । अश्वत्थामा ने उन सबको मार डाला । इसके बाद तीनों ने मिलकर शिविर में आग लगायी । तब वे यह समाचार दुर्योधन को सुनाने के लिए वहाँ से निकल पड़े ।

उस रात को पांडव शिविर में नहीं थे । यदि होते तो वे अश्वत्थामा के हाथों में मर गये होते या अश्वत्थामा के द्वारा होनेवाले इस दारुण हत्याकांड को रोक दिये होते ।

कृपाचार्य, अश्वत्थामा और कृतवर्मा जब दुर्योधन के पास पहुँचे, तब वह अंतिम घड़ियाँ गिन रहा था । उनके मुँह से उप पांडव आदि की मौत का समाचार सुनकर दुर्योधन बड़ा प्रसन्न हुआ और तब अपने प्राण त्याग दिये।

अपने पुत्र तथा रिश्तेदार युद्ध में विजयी होकर भी, अश्वत्थामा के हाथों में मौत को प्राप्त समाचार सुनकर पांडव, द्रौपदी वगैरह बड़े दुखी हुए । भीम क्रोध में आया और अश्वत्थामा का वध करने चल पड़ा । तब द्रौपदी ने कहा - "मैंने सुना है कि अश्वत्थामा के मस्तक पर मणि है, उसका वध करके वह मणि मुझे लाकर दे दो तो मैं प्रसन्न हो जाऊँगी।"

इस पर भीम धनुष और बाण लेकर रथ पर निकल पड़ा । इसे देख कृष्ण ने भीम की मदद के लिए अर्जुन को भी साथ जाने का

आदेश दिया । कृष्ण के साथ युधिष्ठिर और अर्जुन भी एक दूसरे रथ पर सवार हो चल पड़े। वे शीघ्र ही भीम से जा मिले । मगर वे भीम को लौटा नहीं पाये ।

जब वे गंगा के तट पर पहुँचे, तब व्यास महर्षि, उनके अनुचर कई ऋषि और उनके साथ अश्वत्थामा दिखाई दिये । अश्वत्थामा की देह धूलि-धूसरित थी और वह बल्कल पहने हुए था । अश्वत्थामा को देखते ही भीम ने भयंकर गर्जन किया । अश्वत्थामा भीम तथा उसके पीछे आनेवाले कृष्ण, युधिष्ठिर और अर्जुन को देख चकित रह गया । उसे कुछ नहीं सूझा कि क्या किया जाय । तब उसने अपने पिता के द्वारा प्राप्त भयंकर गर्जन किया । अश्वत्थामा भीम तथा उसके पीछे आनेवाले कृष्ण, युधिष्ठिर और अर्जुन को देख चकित रह गया । उसे कुछ नहीं सूझा कि क्या किया जाय । तब उसने अपने पिता के द्वारा प्राप्त भयंकर ब्रह्मशिरो नामक शस्त्र का आह्वान किया और उसे प्रयोग करते हुए कहा - ''अपांडव हो जाय ।'' इस पर कृष्ण की प्रेरणा पाकर अर्जुन ने भी उसी अस्त्र का प्रयोग किया । दोनों अस्त्रों ने भयंकर रूप में आग उगलते हुए एक दूसरे का सामना किया ।

तब व्यास और नारद आगे आये, उन्होंने दोनों को समझाया कि वे अपने-अपने अस्त्रों को वापस ले लें । अर्जुन अपने अस्त्र को वापस ले सका, मगर अश्वत्थामा के द्वारा यह संभव न हुआ । उसने व्यास महर्षि से

दीनतापूर्वक निवेदन किया - ''महात्मा, मैंने भीम को देख भय के मारे इस अस्त्र का प्रयोग किया है । इसे वापस लेना मुझसे संभव नहीं हो रहा है । यह पांडवों का निर्मूल करके ही छोड़ेगा ।''

कृष्ण ने यह बात सुनकर कहा - ''अच्छी बात है ! इस वक़्त पांडवों का अंकुर उतरा के गर्भ में है । उस पर तुम अपने अस्त्र का प्रयोग करो ।''

अंत में ऋषियों ने यह समझौता किया कि अश्वत्थामा अपने मस्तक पर का मणि अर्जुन को देगा और अर्जुन उसे छोड़ देगा । तब अश्वत्थामा ने अपने मस्तक का मणि निकालकर अर्जुन के हाथ में दिया और वह जंगल में तपस्या करने चला गया । भीम ने वह मणि ले जाकर द्रौपदी के हाथ में दिया और समझाया कि अब चिंता न करो । द्रौपदी
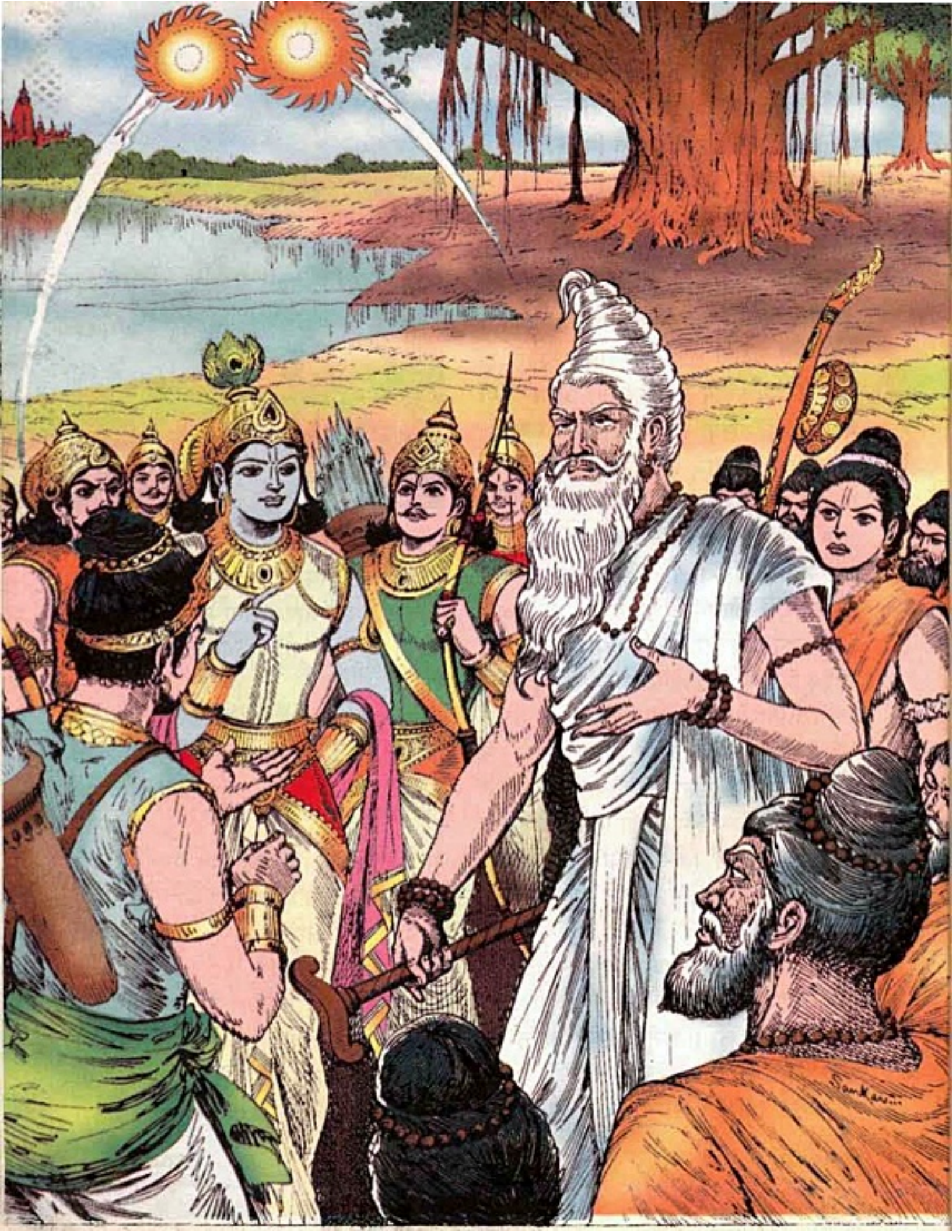
ने वह मणि युधिष्ठिर के मस्तक पर धारण करने को दिया ।

उधर हस्तिनापुर में धृतराष्ट्र अपने सौ पुत्रों की युद्ध में हुई मृत्यु का समाचार जानकर अपार दुख में डूब गया । संजय ने उसे समझाया - "तुम्हारे पुत्र ही क्या? अट्ठारह अक्षौहिणियों की सेना का भी विनाश हो गया है । दुनिया भर के राजा मर गये हैं। उन सब के प्रेत-संस्कार कराओ ।"

धृतराष्ट्र के पीछे गांधारी, कुंती तथा अंतःपुर की अन्य स्त्रियाँ रोते हुए युद्धभूमि में आ पहुँचीं । यह बात मालूम होते ही पांडव, कृष्ण, सात्यकी तथा युयुत्स को साथ ले वहाँ पर आये ।

युधिष्ठिर ने धृतराष्ट्र को नमस्कार किया और उन्हें देखने आये हुए सभी लोगों का परिचय कराया। धृतराष्ट्र भीतर ही भीतर जल रहा था । उसने युधिष्ठिर का पहले आलिंगन किया और बाद में भीम के साथ आलिंगन करने को बढ़ा । तब कृष्ण ने भीम को पीछे की ओर खींच लिया और भीम की मूर्ति को आगे ढकेल दिया । धृतराष्ट्र ने उस मूर्ति का सारी शक्ति लगाकर आलिंगन किया, वह मूर्ति चूर चूर हो गयी । अगर उस मूर्ति की जगह भीम होता तो वह ज़रूर मर जाता। क्योंकि धृतराष्ट्र की शक्ति एक हज़ार हाथियों की शक्ति है । इसलिए धृतराष्ट्र लोहे की मूर्ति को चूर-चूर करके नाक और मुँह से खून ..ते नीचे गिर गया । इसके बाद वह नकली रोना रोने लगा - "ओह, भीम! तुम्हें क्या हो गया?"

कृष्ण ने धृतराष्ट्र को समझाया - "राजन्, चिंता न करो । तुमने भीम को चूर्ण नहीं किया, लोहे की मूर्ति को किया है ।" वह मूर्ति दुर्योधन ने अपने गदायुद्ध के अभ्यास के लिए तैयार करवायी थी ।

इसके बाद कृष्ण ने धृतराष्ट्र को सांत्वना दी - "अब पांडवों को छोड़ मेरे पुत्र ही और कौन हैं?" यों कहते हुए धृतराष्ट्र भीम, अर्जुन नकुल और सहदेव के शरीरों पर हाथ फेरने लगा ।

(क्रमशः)
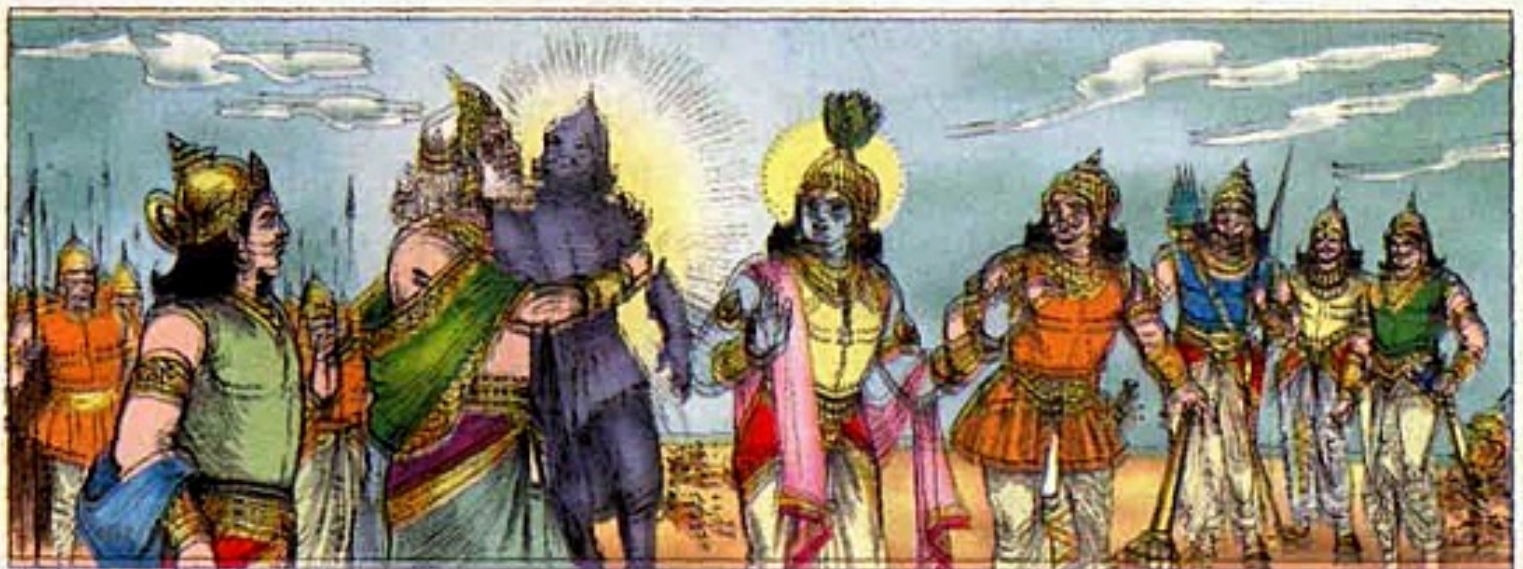
अष्टावधान

अवधानी पांडित्य में अपने पिता से भी बढ़कर है। यद्यपि उसके पिता ने उसका नाम सदानंद रखा था, परंतु अवधान विद्या में उसने असाधारण प्रतिभा दिखायी, इसलिए सभी उसे अवधानी ही कहकर पुकारते हैं।

अवधान विद्या में अष्टावधान बहुत ही कठिन व गंभीर है। शतावधान में उसके चारों ओर सौ विद्वान बैठते हैं। एक-एक करके एक-एक प्रश्न पूछते हैं। उस प्रश्न का उत्तर पद्य रूप में देना पड़ता है। साधारणतया हर पद्य में चार-चार पद होते हैं। अवधानी को पूरा पद्य एक साथ कहना नहीं चाहिये। पहले हर पद्य का पहला पद सुनाना चाहिये। फिर इसका स्मरण रखना चाहिये कि किस-किसने कौन-कौन सा प्रश्न पूछा। हर एक को दो-दो पद सुनाने होंगे। उसी पद्धति में तीसरा और चौथा पद सुनाने के बाद अंत में साथ बैठे विद्वानों को चारों पद सुनाने होंगे। इसके लिए नितांत आवश्यक है, स्मरणशक्ति, मेधाशक्ति, पांडित्य। ऐसा अपूर्व शतावधान, करता है अवधानी।

शतावधान से गंभीर और कष्टतम है अष्टावधान। इनमें अवधानी के चारों ओर प्रश्नों की बौछार करनेवाले आठ पंडित होते हैं। इन्हें पृच्छक कहते हैं। ये पृच्छक पांडित्य से भरे तरह-तरह के प्रश्न पूछते हैं और उसकी परीक्षा लेते हैं। एक समस्या देकर उसकी पूर्ति करने के लिए कहता है तो दूसरा फूल से अवधानी का स्पर्श करता रहता है। तीसरा अंटसंट प्रश्न-पूछते हुए व्यर्थ बातों से सताता रहता है। चौथा सामने ही बैठकर शतरंज खेलता रहता है। पाँचवाँ व्यक्ति चौंसठ अक्षरोंवाला श्लोक पढ़ता रहता है। परंतु ये अक्षर एक क्रम में नहीं होते। जैसा वह चाहता है, वैसा सुनाता जाता है। इसका यह मतलब हुआ कि पहले पचासवाँ अक्षर, उसके बाद अठारहवाँ और फिर प्रथम अक्षर,

मनोहर शुक्ला

यों जैसा उसका मन चाहे, बोलता जाता है । छठवाँ पंडित पद्य पढ़ना बीच में ही बंद कर देता है और पहले ही से वह अंदाज़ा लगाता है कि अवधानी उस स्थल पर किस पद का उपयोग करेगा । इसलिए उस पद का उपयोग न करके किसी दूसरे पद को उसकी जगह पर कहने के लिए बाध्य करता है । सातवाँ व्यक्ति रुक रुककर घंटी बजाता रहता है । आठवाँ व्यक्ति व्याकरण से संबंधित प्रश्न पूछने लगता है । यों वे सबके सब उसकी एकाग्रता में विघ्न डालने के प्रयत्न करते रहते हैं । अंत में अवधानी को चाहिये कि वह इन सबों का उत्तर चमत्कारपूर्ण शैली में दे । उसे सही बताना होगा कि पुष्प स्पर्श कितनी बार हुआ? व्यर्थ बातों का उत्तर बड़ी होशियारी से देना होगा, शतरंज में चाल पर चाल चलते हुए प्रत्यर्थी के खेल पर रोक लगानी होगी; श्लोक के सभी अक्षरों को याद रखना होगा और उन्हें क्रम में रखना होगा और बताना होगा कि वह श्लोक कौन-सा है । पृच्छक से निषिद्ध पद को छोड़कर उसी अर्थवाले किसी शब्द का उपयोग करते हुए पूरा पद्य बताना होगा । उसे यह भी बताना होगा कि कितनी बार घंटियाँ बजायी गयीं । व्याकरण से संबंधित सब प्रश्नों का सही उत्तर देना होगा । एक ही समय पर आठ प्रकार के विभिन्न कार्यों को संभालने की शक्ति होनी चाहिये । ऐसे अद्भुत तथा क्लिष्टतम अष्टावधान को बड़ी ही सुगमता से करता है अवधानी । उसकी यह प्रतिभा सबको आश्चर्य में डुबोती है ।

उसके पिता ने पांडित्य में परिपूर्ण अवधानी के विवाह का प्रस्ताव उसके सामने रखा। पिता का विचार था कि श्रीधाम में रहनेवाली सुमति, योग्य
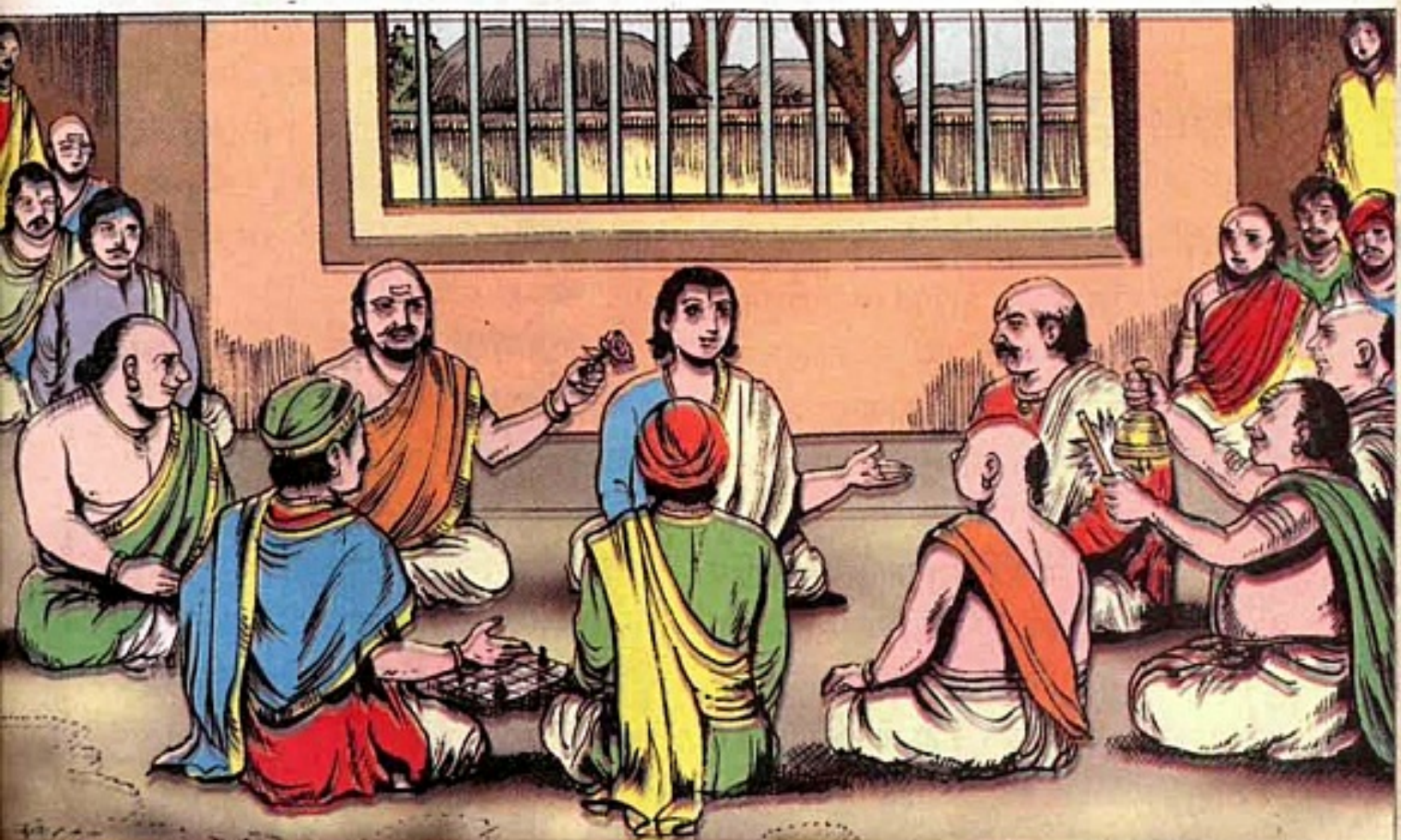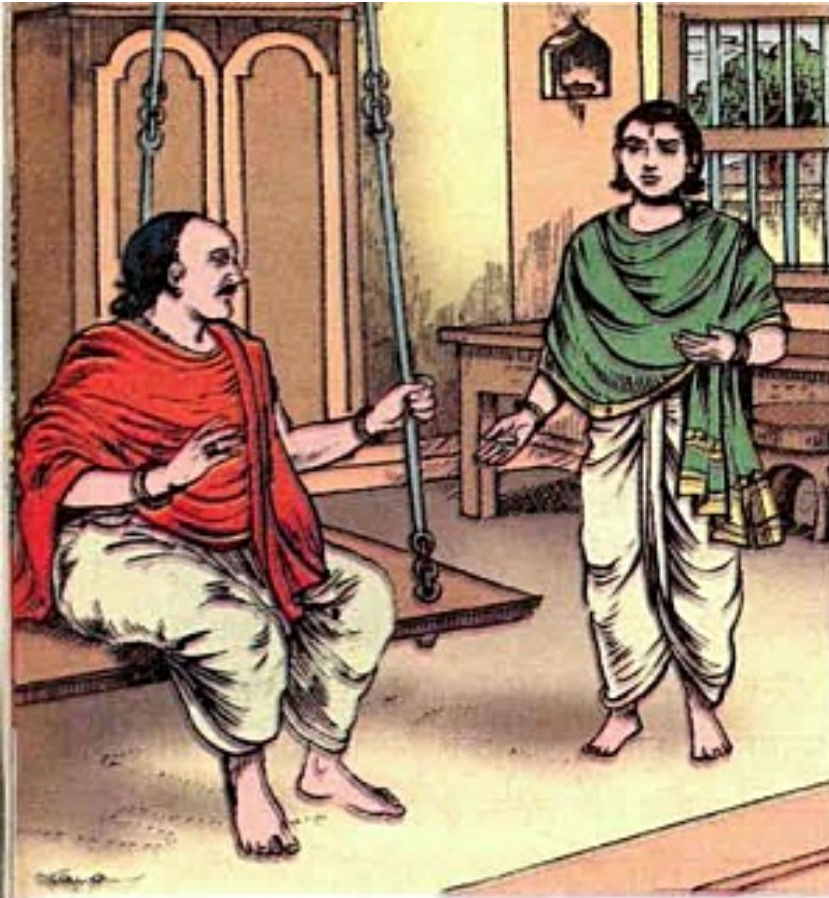
वधू है । किन्तु अवधानी इतना जल्दी विवाह करना नहीं चाहता था। वह चाहता था कि किसी विदुषी से उसका विवाह हो तो हर दिन साहित्यिक गोष्ठियाँ संभव हो सकती हैं और अधिकाधिक ज्ञान की उपलब्धि हो सकती है । घर के कामों के लिए खाना पकाने के लिए नौकरानी रखी जा सकती है ।

एक दिन पिता ने अवधानी से कहा ''पुत्र, घरेलू कामों के लिए नौकर रखें जाएँ या खाना पकाने के लिए कोई रसोइन रखी जाए तो वह घर नहीं कहलाता बल्कि सार्वजनिक भोजनालय कहलाता है । जिस-जिसका जो-जो काम है, उसे करने पर ही वह घर कहलाता है । विवाह के पश्चात् पति-पत्नी को एक-दूसरे की सहायता करनी चाहिये और घरेलू कामों को सुचारू रूप से संभालना चाहिये। साहित्य गोष्ठियाँ ही जीवन का एकमात्र लक्ष्य समझने की भूल करते हो तो न ही पौधों में फूल होंगे और न ही पेड़ों में फल।''

अवधानी ने उत्तर दिया ''आपका कहना संगत ही लगता है, परंतु यह सामान्य जनों के लिए वर्जित होगा, मुझ जैसे पंडित के लिए नहीं । मैं अष्टावधानी हूँ । मेरी पत्नी भी मेरी ही तरह विदुषी हो, विद्याओं में निष्णात हो, तो अच्छा होगा न? मैं ऐसा चाहूँ तो इसमें क्या ग़लती है?'' अवधानी का पिता जान गया कि उसका बेटा केवल पंडित है और व्यावहारिक ज्ञान से एकदम अनभिज्ञ है । उसने हँसते हुए पुत्र से कहा ''एक बार सुमति को देख आओ । अगर वह लड़की तुम्हें अच्छी नहीं लगे तो किसी दूसरी लड़की को देखेंगे ।'' सुमति बड़ी ही सुंदर लड़की है । पिता का विश्वास है कि उसे एक बार देख ले तो अवधानी विवाह के लिए अवश्य मान जायेगा ।

अवधानी पिता की बात को टाल न सका, वह सुमति के गाँव उसे देखने गया । सुमति के पिता ने बड़े प्यार से उसका आदर-सत्कार किया । फिर अपनी बेटी सुमति को बुलाकर उससे कहा ''यह मेरे निकट मित्र का पुत्र अवधानी है । हमारे घर में चार-पांच दिन रहेगा । इसकी अच्छी तरह से देखभाल करना, कोई त्रुटि न हो ।''

सुमति के सौंदर्य को देखकर अवधानी आश्चर्य चकित रह गया । आँखें फाड़-फाड़कर वह उसे देखता ही रहा । वह ताड़ गया कि सुमति के पिता ने जानबूझकर ही उसकी सहायता करने का कार्य-भार उसे सौंपा । क्योंकि इससे दोनों एक-दूसरे के निकट होंगे । उसने मन ही मन सोचा ''मुझे सौन्दर्य में कोई आसक्ति नहीं है, मुझे चाहिये पांडित्य, जो ये नहीं समझते । लौटते समय अपने मन की बात इनसे साफ़ बता दूँगा ।''

परंतु दूसरे ही दिन सुमति के व्यवहार ने उसे मुग्ध कर दिया । उसे लगा कि उसका अनुमान गलत है ।

मुर्गी के बांग के साथ-साथ जागती है सुमति । आंगन साफ़ करती है और चौक पूरती है । खाट पर लेटी बूढ़ी दादी को यथाक्रम दवा पिलाती है । पूजा के लिए आवश्यक सामग्री का प्रबंध करती है, जिससे उसकी माँ निश्चिन्त हो पूजा कर सके । रसोई घर में भाभी को मदद पहुँचाती है । सबेरे का नाश्ता सबको देने के बाद तालाब से वही पानी भी ले आती है । पिता और बड़े भैय्या की सुविधाओं का पूरा ख्याल रखती है ।

बड़े भाई का लड़का बीच-बीच में अंटसंट प्रश्न पूछता रहता है, बड़ी ही सहनतापूर्वक उनके उत्तर देती है और उसे समझाती-बुझाती है । बड़े भाई के बच्चे को सुलाने के लिए लोरी गाती है । कोई घर आये तो उनके आने का कारण जानकर उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति करती है । इतने काम होते हुए उसने आवधानी की आवश्यकताओं की पूर्ति में कोई कसर नहीं रखी । बीच-बीच में अपने को सजाती-संवारती है । जब देखो, खिलखिलाकर हंसती रहती है । कोई उसका मज़ाक उडाने की जुर्रत करे तो उचित कहावत सुनाकर उनका मुँह बंद करती है । उसकी इस व्यवहार-शैली पर मुग्ध अवधानी समझ गया कि सुमति बड़ी ही योग्य कन्या है।

शाम को सुमति, अवधानी को गाँव दिखाने ले गयी । उसने उसे गाँव की विशेषताएँ बतायीं, ऐतिहासिक स्थल दिखाये, उस गाँव के विष्णु मंदिर का महात्म बताया । अवधानी ने उसके सांस्कृतिक ज्ञान की प्रशंसा करते हुए कहा "अपने गाँव के बारे
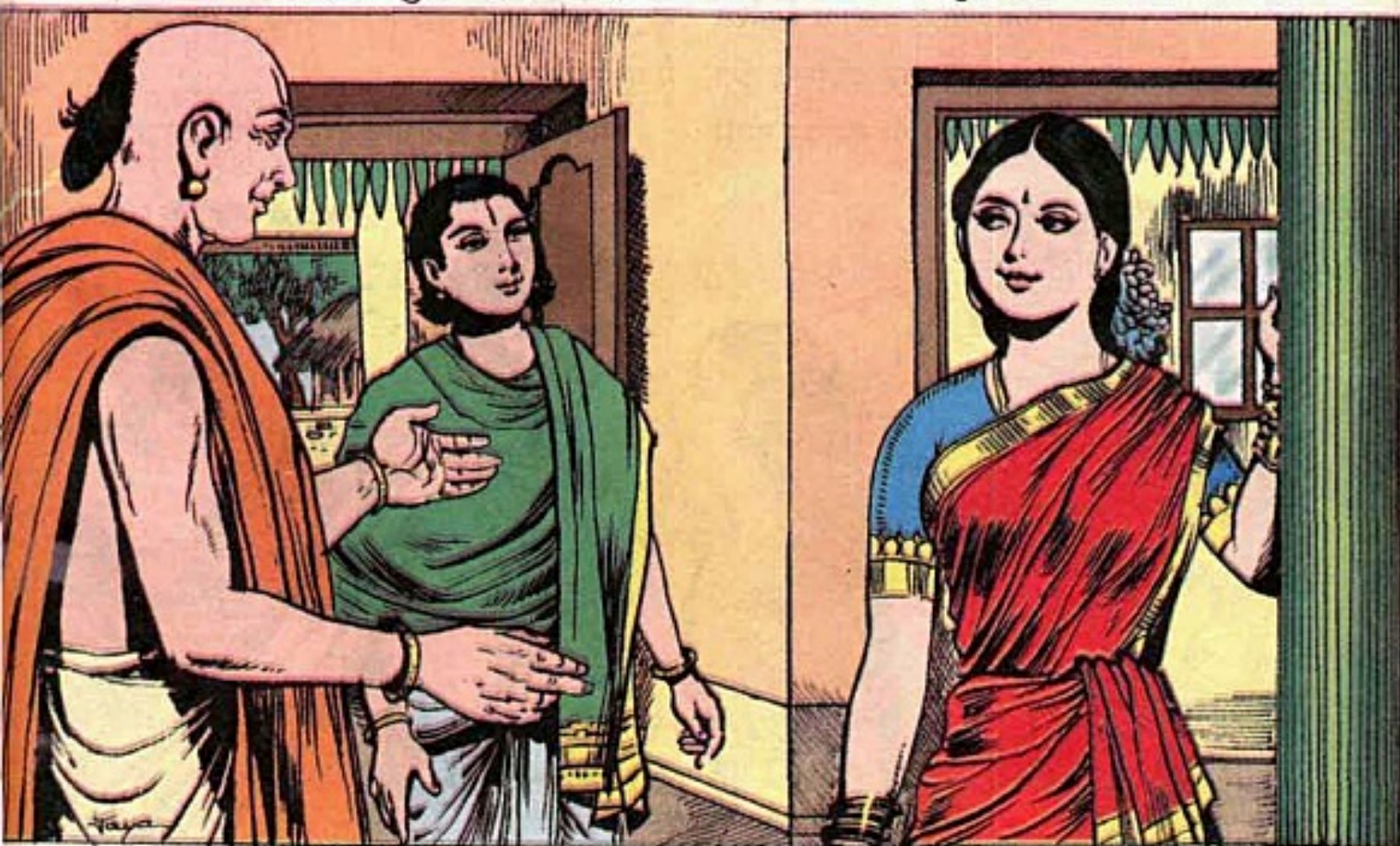
में तुम बहुत कुछ जानती हो, पर मैं अपने गाँव के बारे में बहुत कम जानता हूँ ।''

सुमति ने हँसकर कहा ''तुम तो मेरी झूठी प्रशंसा कर रहे हो । तुम्हारे पांडित्य के सामने मेरा ज्ञान शून्य है । तुम अपने बारे में बताओ, सुनने की मेरी तीव्र इच्छा है ।''

अवधानी ने अपने अष्टावधान के बारे में सविस्तार बताया । सुमति ने बड़े ध्यान से उसकी बातें सुनीं । अवधानी ने अपने हाथ का कंकण दिखाकर कहा ''यह स्वर्णकंकण मुझे मेरे अष्टावधान के लिए प्राप्त हुआ है ।''

सुमति ने लंबी सांस खींचते हुए कहा ''पता नहीं, कब मुझे यह सौभाग्य प्राप्त होगा ।''

''सुमति, मैंने दिन भर तुम्हारी प्रतिभा देखी । तुमसे किये जानेवाले कार्य अष्टावधान से भी बढ़कर हैं । तुम्हारी स्मरणशक्ति, सहनशक्ति, व सामर्थ्य अद्भुत हैं । तुम चाहो तो मैं तुम्हें प्रशिक्षण दूँगा और एक ही साल के अंदर विदुषी बनाकर तुमसे विवाह करूँगा'' अवधानी ने कहा ।

सुमति 'न' के भाव में अपना सिर हिलाती हुई बोली ''मैं अवधानी बनना नहीं चाहती । मानती हूँ कि श्रोताओं को आह्लादित करना उत्तम व श्रेष्ठ कला है, पर मुझे मानवों की आवश्यकताओं की पूर्ति में ही आनंद मिलता है । इसीलिए मैं घर में सबकी सहायता करती रहती हूँ ।''

उसकी इन बातों को सुनकर अवधानी हक्का-बक्का रह गया । उसने कहा ''तुमने सच कहा । मेरी विद्या विनोद के लिए है, फुरसत के समय काटने के लिए है, तो तुम्हारी विद्या है, दूसरों को सुखी रखना और उन्हें विश्राम पहुँचाना । मेरे अष्टावधान से तुम्हारा अष्टावधान ही उत्तम है । तुम्हें विदुषी बनाने की मेरी इच्छा अविवेकपूर्ण थी। सच कहा जाए तो इस स्वर्णकंकण को पहनने के योग्य तुम्ही हो ।'' उसने अपना कंकण निकालकर उसकी कलई में पहना दिया ।

इसके कुछ ही दिनों के बाद उनका विवाह हुआ।
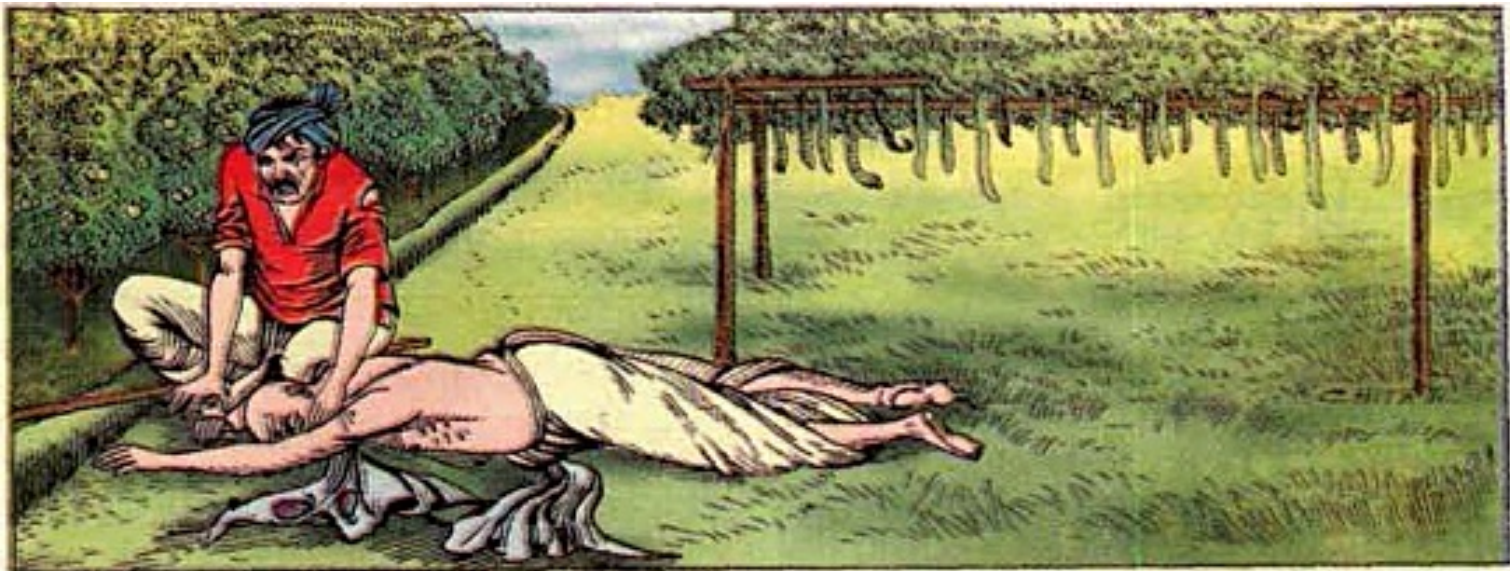
संदेह और समाधान

शबरवाड़ी नामक गाँव के मंदिर के पुजारी का नाम शंकराराध्य था । गाँव के छोटे-बड़े सब उनका आदर करते थे ।

शंकराराध्य प्रातः बिस्तर से उठते, नदी में जाकर नहाते, वहाँ के बगीचों में से तरकारी तोड़कर पत्नी के हाथ में देकर, मंदिर चले जाते। यही उनका दैनिक कार्य था ।

शंकराराध्य ने कभी नहीं सोचा कि इस तरह दूसरों के बगीचों में से तरकारियाँ तोड़ ले जाना अपराध है । किसी भी बगीचे में वह जाते, तो लोग उन्हें खुशी से तरकारियाँ देते । पर मुँह अंधेरे कोई बगीचों में न होता । इसलिए शंकाध्य को दूसरों से माँगकर तरकारियाँ लेने का मौक़ा नहीं मिलता था।

यह आदत आखिर एक खतरे का कारण बनी। एक बगीचे के मालिक को संदेह हुआ कि उसके बगीचे में रोज चोरी हो रही है । वह एक दिन रात को बगीचे के एक कोने में छिपकर बैठ गया । बड़े सवेरे शंकराराध्य रोज की भाँति नहा-धोकर, बगीचे में पहुँचे । वे चार ही बैंगन तोड़ पाये थे कि तरकारियाँ तोड़ने की आवाज सुनकर बगीचे के मालिक ने पीछे से जाकर लाठी उन पर जमा दी । अंधेरे में वह पहचान न पाया कि वह कौन है ।

"शिव, शिव!" कहते पुजारी बेहोश हो गिर पड़ा ।

बगीचे के मालिक ने सोचा था कि चोट खाकर चोर भाग जाएगा, लेकिन उसके नीचे गिरते ही मालिक ने नज़दीक आकर देखा, वह चोर पुजारी था । उसे लगा कि उसकी चोट से पुजारी मर गया है! वह हिलता-डुलता तक न था । नाक के पास हाथ रखकर देखा, साँस भी नहीं चल रही थी ।

बगीचे का मालिक घबरा उठा । पुजारी को

पचीस वर्ष पहले 'चन्दामामा' में प्रकाशित पुरानी कथा

चोर मानना भी अपराध है । उसको मार डालना तो बड़ा पाप ही है! यह बात गाँव में मालूम हो जाएगी, तो उसे गाँव में लोग रहने भी न देंगे । यह सोचकर वह उसी क्षण गाँव छोड़कर कहीं भाग गया ।

लेकिन पुजारी मरा न था । लाठी की चोट खाकर उसका सर चकरा गया । थोड़ी देर बाद ठण्डी हवा के लगने से वह होश में आया। उसे अपनी करनी याद हो आयी शायद बगीचे के मालिक ने तरकारियाँ तोड़ते देख उसे लाठी से मारा होगा! उसका पता भी नहीं चल रहा है । अपनी चोरी का समाचार सब गाँववालों को सुनाकर उनको लाने गया होगा । इज्जत के साथ दिन काटनेवाले उसको अब लोग चोर समझेंगे तो कैसा अपमान होगा ! आगे वह सर उठाकर गाँव में चार लोगों के सामने चाल-फिर न सकेगा ।

यह सोचकर शंकराराध्य भी गाँव छोड़, भाग गया । तब पूरब में सूरज उग रहा था ।

पुजारी की पत्नी ने एक-दो घड़ी तक इंतजार किया, पुजारी को न लौटते देख उसने यह बात अड़ोस-पड़ोस वालों से कह दी । मुँह अंधेरे नहाने गया हुआ पुजारी अब तक नहीं लौटा, मंदिर में भी नहीं है । नहानेवाले घाट पर ढूँढ़ा गया तो बगीचे के पास पुजारी का लोटा पड़ा दिखायी दिया । इस पर गाँववालों ने सोचा कि पुजारी नहाते हुए गहरे पानी में जाकर बह गया होगा!

लेकिन इस बीच एक और बात प्रकट हो गयी। वह यह कि बगीचे के मालिक का भी पता नहीं है । बगीचे के एक कोने में कूड़े का ढेर था । उसे हटाकर देखा तो उसमें जली हड्डियाँ दिखाई पड़ी ।

अब गाँवालों ने निर्णय किया कि मालिक पुजारी की हत्या करके, कूड़े में डाल आग लगाकर भाग गया है । बगीचे के मालिक पर हत्या का आरोप लगाकर राजभट उसकी खोज करने लगे ।

एक साल बीत गया । इस बीच में मालिक बैरागी का वेश धरकर सारे देश में घूमता रहा । उसे अपनी पत्नी और बच्चों को देखने की बड़ी लालसा पैदा हो गयी । इसलिए हिम्मत करके वह अपने गाँव में लौटा, और गाँव के बाहर एक सराय में लेटा रहा । उसने गाँववालों की बातों से जान लिया कि लोग यह सोचते हैं कि उसने पुजारी की हत्या करके उसे जला दिया है । लेकिन पुजारी की लाश को किसी ने नहीं देखा है । इसका मतलब

पुजारी मरा नहीं है । उसके भाग जाने पर पुजारी भी उठकर कहीं चला गया है, पर यह कोई नहीं जानता था कि वह क्यों चला गया है!

मालिक ने निश्चय किया कि पुजारी चाहे कहीं किसी भी रूप में क्यों न हो, वह उसे ढूँढ निकालेगा। इस प्रकार सारे गाँव छानते वह घूमने लगा । जहाँ भी कोई साधु या बैरागी दिखायी पड़ता, उसे बड़े ध्यान से देखता और उसका पूरा पता लेता ।

इस बीच में पुजारी ने भी सन्यासी का बेश धारण कर सारे तीर्थों की यात्रा की । आखिर पत्नी को देखने के ख्याल से उसने घर की राह ली ।

एक दिन एक गाँव के सराय में अचानक दोनों मिले । मालिक की जान में जान आ गयी । उसने पुजारी के पास जाकर पूछा-''आपका नाम शंकराराध्य है न? आप इस तरह बेश बदल कर क्यों घूमते हैं?''

पुजारी चकित हो गया । उसने सोचा कि यह बैरागी भूत, भविष्य और वर्तमान की बातें जाननेवाला है । इसलिए सच्ची बात कह दी- ''मैंने तरकारियों की चोरी की, फलत: बगीचे के मालिक से लाठी खाकर, उस गाँव में अपमान की जिंदगी जीने के बदले सन्यासी बनना अच्छा समझा और इस तरह देश का पर्यटन कर रहा हूँ ।''

''पुजारी जो मैं ही वह मालिक हूँ । अंधेरे में आपको पहचान न पाया, इसलिए लाठी फेंकी । उस करनी का फल भोग रहा हूँ । गाँव में यह अफ़वाह फैल गयी कि मैंने आपकी हत्या की है । किसी ने सपने में भी यह नहीं सोचा कि अपने तरकारियाँ चुरायी हैं । लेकिन मुझे पकड़ने के लिए राजभट घूम रहे हैं । आप जीवित गाँव में दिखायी देंगे तभी मुझ पर से वह आरोप दूर होगा। मैं भी अपनी पत्नी और बच्चों को देखने के लिए तड़प रहा हूँ । चलिये, अपने गाँव जायेंगे ।'' बगीचे के मालिक ने कहा ।

दोनों की समस्या हल हो गयी । दोनों अपने गाँव लौटे । उन दोनों ने गाँववालों को समझाया कि भगवान की कृपा से हम दोनों की एक ही साथ तीर्थ यात्राएँ करने की इच्छा हुई । तीर्थ यात्राएँ समाप्त कर गाँव लौट रहे हैं । गाँववालों ने सोचा-उनका कहना सच है ।

चन्दामामा

'भारत की खोज' प्रश्नोत्तरी

इस अंक में दी गई प्रश्नोत्तरी के उत्तर अगले अंक में प्रकाशित किये जायेंगे । तब तक इनके उत्तर आप स्वयं खोजने की कोशिश करें और भारत की प्राचीन परम्परा के ज्ञान से अपने को समृद्ध करें ।

अ) सीता के पिता जनक द्वारा शाशित राज्य विदेह भारत के किस भाग में स्थित था? इसकी राजधानी मिथिला कहाँ पर स्थित थी?

आ) प्राचीन-काल में कोशल कहा जाने वाला राज्य भारत के किस भाग में था और इसकी राजधानी सारस्वत कहाँ पर स्थित थी?

इ) लिच्छाविसियों द्वारा स्थापित वैशाली कहाँ स्थित थी?

ई) प्राचीन कलिंग का राज्य तोशाली कहाँ था?

उ) गांधार की भूमि कहाँ थी?

एन नौजवान ब्राह्मण जंगल में रास्ता भूल गया और आदिवासियों के सरदार के घर जा पहुँचा । कुछ समय बाद उसने सरदार की बेटी से बिवाह कर लिया और वहीं रहने लगा । उसने देखा कि प्रतिदिन सरदार हाथ में फूल लेकर कहीं जाता है और एक घंटे बाद वापस आता है । सरदार की पत्नी से उसे पता चला कि एक रहस्यमय गुफा में एक देवता हैं, जिन्हें सरदार के पिता के पुर्वज पूजते थे । नौजवान ब्राह्मण ने गुफा के भीतर जाने का निर्णय किया । तब सरदार ने उसकी आँख पर पट्टी बाँधकर उसे वहाँ ले गया । ब्राह्मण ने अपने हाथ में सरसों के दाने रख लिए और पूरे रास्ते गिराता गया । वर्षा के बाद सरसों के दाने बीज का रूप धारण कर पौधे बन गए और ब्राह्मण को गुफा तक जाने का रास्ता मिल गया । उसने अपने स्वसुर द्वारा पूजे जाने वाले देवता का पता लगा लिया और जंगल छोड़कर शहर की ओर चला गया । वहाँ के राजा ने पवित्र मूर्ति स्थापित कर वहाँ मंदिर बनवाया। जो अब भारत के प्रसिद्ध मंदिरों में गिना जाता है और पूजा होती ही।

वह मंदिर कौन सा है ? और देवता का नाम क्या है?

वह ब्राह्मण कौन था? आदिवासियों का सादार कौन था? और ब्राह्मण की पत्नी कौन थी?

उस राजा का नाम क्या था? जिसने देवता का मंदिर बनवाया और वह ब्राह्मण क्या लाया था?

कहानी को सही अन्त दीजिए और पुरस्कार जीतिए

सृजनात्मक प्रतिस्पर्धा

नीचे एक कहानी का आरम्भ दिया गया है। इसमें एक रोचक कथा के सभी उपादान मौजूद हैं। किन्तु यह 'सृजन' तुम्हारे हाथों में है। तुम्हें सभी सम्भव कथाक्रमों की कल्पना करनी है और कहानी को अन्तिम रूप देना है। साथ ही एक आकर्षक शीर्षक भी। यह तुम्हें दो सौ से तीन सौ शब्दों के बीच करना है - न कम, न अधिक। सर्वोत्तम प्रविष्टि को आकर्षक पुरस्कार दिया जायेगा तथा इस पत्रिका में प्रकाशित भी किया जायेगा। यह प्रतिस्पर्द्धा हमारे बाल पाठकों के लिए है। अपना नाम, उम्र, कक्षा, विद्यालय का नाम तथा घर का पता (पिन कोड के साथ) लिखना न भूलना।

वीरबाबू विक्रमपुरी का एक नौजवान किसान था। जिसने एक ख़ुशहाल और सुखी जीवन व्यतीत किया। उसके पास उपजाऊ भूमि का एक टुकड़ा था, जिसमें कड़ी मेहनत करके वह अनाज पैदा करता और बाजार में उसे अच्छे दामों पर बेच देता। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि वह अपने खेत की रखवाली बड़े ही ईर्ष्या के साथ करता था।

एक साल वर्षा की मात्रा कम होने से सारी खेती नष्ट हो गई। यही नहीं बल्कि अकाल के कारण जो भी अनाज उसने बचाया था वह चोरी हो गया। अगले वर्ष सौभाग्य से पर्याप्त वर्षा हुई और खेतों में अच्छी फसल लहलहाने लगी। बीर बाबू के खेत में विशेषकर मकई की, अच्छी फसल उगी।

पिछले वर्ष के अनुभव को याद करके उसने अपने खेत के एक कोने में एक झोपड़ी डाल दी, जहाँ से वह अपनी फसल की देख भाल कर सके। एक रात को उसने कुछ अवाजें सुनी जो खेत से आ रही थीं। उसे पता चल गया कि यहाँ कोई घुस आया है। एक डंडा हाथ में लिए वह उन्हें भगाने के लिए दौड़ पड़ा।

उसने देखा कि चार आदमी उसके मक्के के पेड़ों को जल्दी-जल्दी काट रहे हैं। चाँद की मध्यम रोशनी में वह उन्हें पहचान गया। वे लोग पास के ही एक गाँव के निवासी थे। उसमें से एक ब्राह्मण था, दूसरा सुनार, तीसरा महाजन और चौथा उसी की भाँति एक किसान था। चार लोगों का अकेले सामना करने से वह डर रहा था। उसने सहायता मांगने के लिए चिल्लाना भी उचित नहीं समझा। हो सकता है वे भाग जाएँ। उसने एक नई योजना सोची। उसने अपनी लाठी फेंक दी और साहस के साथ उनका सामना किया।

''वीरबाबू ने उन चारों को कैसे सम्भाला होगा? क्या वे चारों अपने इस कार्य पर लज्जित हुए होंगे? आपकी प्रवेशिका विश्वसनीय होनी चाहिए और कहानी का शीर्षक देना न भूलो। अपनी प्रवेशिका के ऊपर, लिखो - ''सृजनात्मक प्रतिस्पर्धा'' जो हमें २० दिसम्बर २००० तक पहुँच जाए।

- सम्पादक

भारत की खोज प्रश्नोत्तरी नवम्बर २००० का उत्तर

१. अ. सुदामा, जो कुचेला के नाम से भी जाने जाते हैं।
आ. प्रह्लाद, इ. ध्रुव ई. रोहिताश्व, राजा हरिश्चन्द्र और रानी तारामती के पुत्र।
उ. अभिमन्यु।

२. मेयकन्दर और सदासिव आचार्य
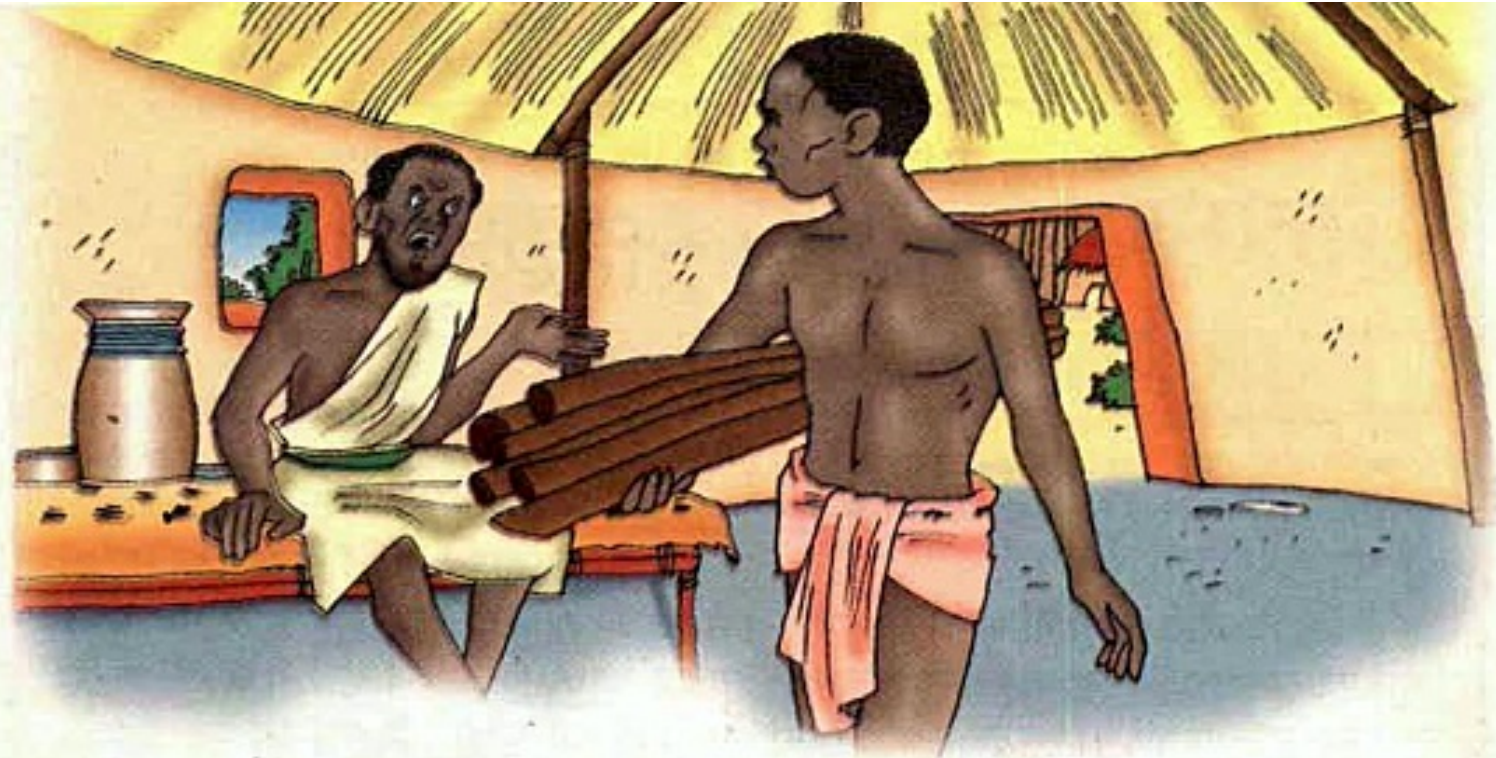
बेटे का निर्णय

अफ्रीका देश के एक जंगल के पास डोटुन नामक एक ग़रीब रहा करता था। जंगल में लकड़ियाँ काटकर वह अपनी जीविका चला रहा था। अपने बेटे टुंडी को बढ़ता हुआ देखकर वह खुशी से फूला न समाता था। टुंडी अब बारह साल का हो गया। उसकी उम्मीद थी कि बेटा उसकी मदद करेगा और भविष्य में ज़िन्दगी आराम से कटेगी। वह भी अपने पिता के साथ जंगल जाने लगा और लकड़ियाँ काटने में अपने पिता की भरसक मदद करने लगा।

एक दिन डोटुन बीमार पड़ गया। वह खाट पर से उठ नहीं पाया, इसलिए उसने अपने बेटे से जंगल जाकर लकड़ियाँ काट ले आने को कहा। टुंडी अपने पिता के आदेश पर जंगल निकल पड़ा। रास्ते में उसे उसका एक दोस्त दिखायी पड़ा। उसके साथ खेलते हुए उसने अधिक समय वहीं बिता दिया। दुपहर को लौटने के पहले उसने चंद लकड़ियाँ काटीं और घर लौटा।

यह देखते ही डोटुन आपे से बाहर हो गया। उसने क्रोध-भरे स्वर में कहा ''तुम तो निकम्मे हो। किसी भी काम के लायक़ नहीं हो। इतनी कम लकड़ियाँ काटकर ले आये हो। इनसे क्या होगा? आज लकड़ियाँ नहीं बेचीं तो कल क्या खायेंगे? क्या खरीद पायेंगे?'' यों उसने उसे खूब डांटा और पीटा। वह रोता हुआ घर से बाहर निकल गया।

''जा, चला जा, घर में क़दम रखा तो टांगें तोड़ दूँगा। अपने आपको समझते क्या हो?'' चिल्ला-चिल्लाकर वह थक गया और कंबल ओढ़कर सो गया।

टुंडी की समझ में नहीं आया कि क्या किया जाए। वह जंगल की तरफ़ चलता जाने लगा। बहुत दूर जाने के बाद वह थक गया। उसे ज़ोर से भूख भी लगने लगी। वह एक क़दम भी आगे बढ़ा नहीं पा रहा था। एक पेड़ के नीचे वह सो गया।

शाम हो गयी। एक व्यापारी शहर से अपने नौकरों को साथ लेकर अपने गाँव लौट रहा था। उसने पेड़ के नीचे सोते हुए उस लड़के को देखा।

अफ्रीका की लोक कथा

उसने टुंडी को जगाया और पूछा "तुम कौन हो? क्यों इस जंगल के बीचों बीच सो रहे हो? वह भी इस वक़्त?"

"मेरा कोई घर नहीं, मुझे बड़ी भूख लगी है" टुंडी ने निराशा-भरे स्वर में कहा। व्यापारी ने उसे कुछ रोटियाँ दीं। उन्हें खाकर उसने पानी पी लिया। अब उसका पेट भर गया। व्यापारी के मन में उस अनाथ के प्रति दया जगी। उसकी अपनी कोई संतान न थी। वह उसे अपने साथ ले गया।

दुपहर हो गयी, फिर भी बेटा घर वापस नहीं आया। डोटुन की चिंता क्षण-क्षण बढ़ती जा रही थी। उसे लगा कि उसने बहुत ज्यादा ही उसे डांटा-डपटा। उसकी परेशानी दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही थी। दिन गुज़रते जा रहे थे, पर बेटे का कोई पता नहीं चला। वह बड़ी ही बेचैनी से अपने बेटे के आने की प्रतीक्षा में दिन गुज़ारने लगा।

यहाँ व्यापारी टुंडी को अपने सगे बेटे की तरह पालने-पोसने लगा। उसने अब व्यापार के कौशल भी सीख लिये। टुँडी के दिन आराम से गुज़र रहे थे, उसे अब किसी बात की चिंता नहीं थी, फिर भी जब कभी भी उसे अपने माँ-बाप की याद आती, वह बहुत ही दुखी हो जाता था। चुपचाप उन्हीं को याद करते हुए कहीं दूर अकेले बैठ जाता था। वह अपने माँ-बाप को और घर को भुला न सका।

व्यापारी की पत्नी टुंडी को बहुत चाहने लगी, क्योंकि वह बहुत ही विश्वासपात्र और ईमानदार लड़का था। अपने सगे बेटे की तरह उसकी देखभाल करने लगी। सगी माँ की तरह वह उससे प्यार करने लगी। यों कुछ साल गुजर गये।

डोटुन एक दिन जंगल में मिले हाथी के दांत को शहर में बेचकर लौट रहा था, तब उसके बेटे की ही शकल सूरतवाले एक जवान को देखकर चिल्ला पड़ा "बेटे, रुक जाना"। वह घुड़सवार रुक गया। नज़दीक जाकर उसने उस जवान को गौर से देखा और कहा "तुम टुंडी ही हो न? खोये हुए मेरे ही बेटे हो न?"

टुँडी घोड़े से उतरा और कहा "हाँ, मैं टुंडी ही हूँ।" कहते हुए उसने अपने पिता को नमस्कार किया।

अपने बूढ़े पिता की हालत देखकर टुंडी बहुत ही दुखी हुआ। उसने कहा "पिताजी, अब जिस घर में मैं रह रहा हूँ, वहाँ मेरे साथ चलिये। कुछ दिनों तक वहीं विश्राम करके लौटना।"

डोटुन ने बेटे की प्रार्थना मान ली।

दोनों मिलकर व्यापारी के घर पहुँचे। टुंडी ने व्यापारी से अपने पिता का परिचय कराया। व्यापारी ने भी उसके साथ बड़ा ही अच्छा व्यवहार किया।

सबेरे ही डोटुन ने घर को जो हुए व्यापारी से कहा "अपने बेटे को अपने साथ घर ले जाऊँगा।"

''यह कैसे मुमकिन हो सकता है दोस्त । अब यह तुम्हारा बेटा नहीं है, मेरा बेटा है । तुमने उसे घर से निकाल दिया । जब मैंने उसे शरण दी, अपने यहाँ रखा, पाला-पोसा तब उसका अपना कोई घर नहीं था । अब यही उसका घर है ।'' व्यापारी ने सविनय कहा ।

''भगवान की दया से मेरा बेटा मुझे अब मिल गया । उसे अकेला छोड़कर कैसे जा सकूँगा ? यह सच है कि मैं उस पर नाराज़ हो उठा और वह घर छोड़के चला गया । लेकिन बेटे और बाप के बीच में यों झगड़े होते ही रहते हैं । यह बिल्कुल स्वाभाविक बात है ।''

इस प्रकार दोनों में बहुत देर तक इस बिषय को लेकर वाद-विवाद हुआ । अंत में व्यापारी ने कहा ''इस समस्या का परिष्कार है । उसे यहाँ रहना है या तुम्हारे साथ, इसका निर्णय टुंडी ही थे । उसी के निर्णय पर इसका परिष्कार निर्भर है ।''

''हाँ, मुझे भी यह शर्त स्वीकार है । टुंडी का निर्णय होगा'' डोटुन ने सहर्ष मान लिया । ''ठीक है । कल सबेरे इसका निर्णय होगा ।'' व्यापारी ने कहा ।

दूसरे दिन व्यापारी बाप और बेटे को लेकर आगे-आगे जाने लगा । उसके हाथ में चमकती हुई एक लंबी तलवार थी । बाप-बेटे की समझ में नहीं आया कि व्यापारी क्या करने जा रहा है और उन्हें कहाँ ले जा रहा है । वे चकित होकर देखते ही रह गये ।

जंगल और नदी के बीच के एक निर्जन प्रदेश में व्यापारी रुक गया । उसने तलवार टुंडी के हाथ में दी और कहा ''बेटे, अब तुम अपना फ़र्ज निभाओ ।''

टुंडी ने विनयपूर्वक पूछा ''बताइये तो सही, अब मुझे क्या करना चाहिये?''

''अगर तुम्हारा निर्णय अपने जन्मदाता पिता के साथ जाने का है तो मेरा सिर काट दो । अगर तुम अपने दूसरे पिता के साथ रह जाना चाहते हो उसका सिर काट दो'' व्यापारी ने स्पष्ट शब्दों में कह दिया ।

टुंडी थोड़ी देर तक मौन रहा । वह किसी निर्णय पर नहीं आ पा रहा था । बाद में उसने झुककर दोनों को प्रणाम किया और कहा ''मैं अब जान गया हूँ कि मेरा कर्तव्य क्या है? अपने सिर को स्वयं काट लूँगा ।'' कहकर उसने तलवार उठायी ।

दोनों ने बड़े ही दीन स्वर में उससे गिड़गिड़ाकर कहा, ''बेटे, रुक जा । ऐसा मत कर ।''

तीनों की आँखों में आँसू भर आये ।

फिर उन्होंने इस समस्या के परिष्कार का दूसरा मार्ग ढूँढा । डोटुन व उसकी पत्नी दोनों व्यापारी के घर आ गये । यों टुंडी ने जन्म देनेवालों और पालपोसकर बड़ा करनेवालों के साथ न्याय किया । दोनों को सुखी रखा । अब दोनों की तरफ़ से कोई भी शिकायत नहीं है । अब उसके दो माँ और दो पिता हैं, जो उसे बेहद प्रेम करते हैं ।
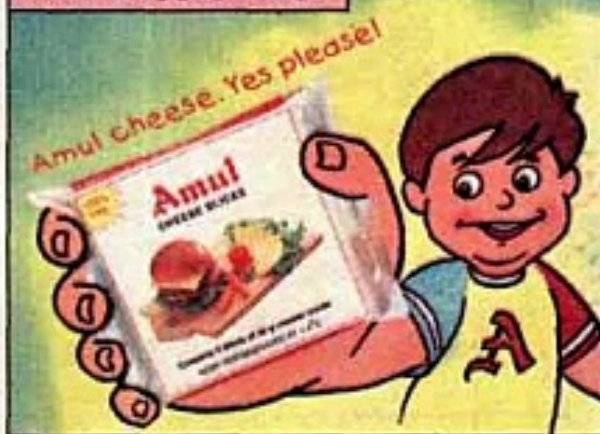
Marketed by Gujarat Co-operative Milk Marketing Federation Limited, Anand 388 001. E-mail: cheese@amul.com For FREE home delivery of our products in select cities visit the Amul Cyberstore at www.amul.com

daCunha/ACS/2/2000

चित्र कैप्शन प्रतियोगिता

क्या तुम कुछ शब्दों में ऐसा चित्र परिचय बना सकते हो, जो एक दूसरे से संबंधित चित्रों के अनुकूल हो?
तुम एक सामान्य पोस्टकार्ड पर इसे लिख कर इस पते पर भेज सकते हो :

चित्र परिचय प्रतियोगिता, चन्दामामा,
प्लाट नं. 82 (पु.न. 92), डिफेन्स आफिसर्स कालोनी, इकाडुथांगल, चेन्नई - 600 097.

जो हमारे पास इस माह की 25 तारीख तक पहुँच जाए। सर्वश्रेष्ठ चित्र परिचय पर 100/- रुपये का पुरस्कार दिया जाएगा, जिसका प्रकाशन अगले अंक के बाद के अंक में किया जाएगा।

ब धा इ यां

अक्तूबर अंक की पुरस्कार विजेता हैं :
श्रीमती चंचल आनंद
9-एफ, पंजाबी भाग,
गोविंद पूरा
भोपाल - 462 023. (मध्य प्रदेश)

विजयी प्रविष्टि :
पहला चित्र : "मुन्ना राजा पकड़े डाली
दूसरा चित्र : दीदी, भैया चढ़ें पहाडी ।"

चंदामामा वार्षिक शुल्क
भारत में 120/- रुपये डाक द्वारा

Payment in favour of CHANDAMAMA INDIA LIMITED. For details address your enquires to:
New 82 (old 92), Defence Officers Colony, Ekkatuthangal, Chennai - 600 097.

MILLENNIUM OFFER

GOODIES for KIDDIES
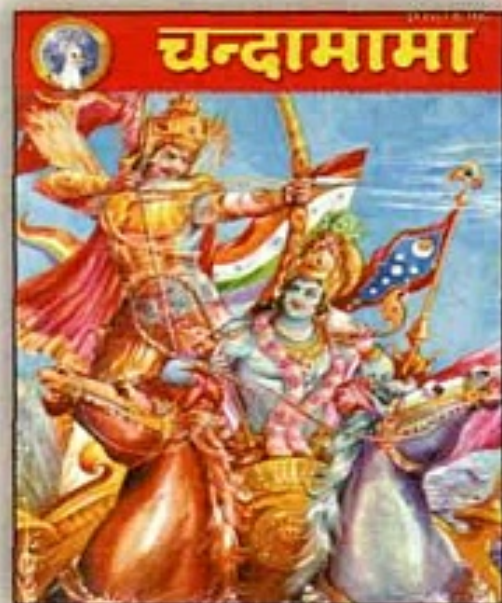
Avail our
Special Gift Offer
before January 1, 2001

A DASH! watch free with

3-year subscription to

CHANDAMAMA

AVAILABLE IN 12 LANGUAGES

Remit Rs. 360/- by Draft or M.O favouring
Chandamama India Limited
to:
Publication Division,
Chandamama India Limited,
82, Defence Officers' Colony,
Guindy Industrial Estate P.O., Chennai 600 032.
E-mail: ***chandamama@vsnl.com***

FREE

The models shown here are only indicative.

Wow watches from Titan

Offer valid on 3-year subscriptions within India and till stocks last. Conditions apply.